अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

वार्षिक मूल्य ६) ✠ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार ✠ एक प्रति २ आना

वर्ष–३, अंक–६ ✠ राजघाट, काशी ✠ शुक्रवार, ९ नवंबर, '५६

प्रश्न :—आपने कहा था कि गांधीजी के जमाने के सत्याग्रह का स्वरूप निगेटिव (अभावात्मक) था। इसके बारे में और समझाइये।

विनोबा :—गांधीजी ने ऐसी इच्छा नहीं रखी थी कि वह सत्याग्रह निगेटिव बने; फिर भी वह वैसा बना। उनके मनमें पॉजिटिव (भावात्मक) चीज थी, इसीलिए खादी, ग्रामोद्योग, नयी तालीम आदि कई बातें उन्होंने उसके साथ जोड़ीं। लेकिन लोगों के मन में सिर्फ अंग्रेजों को हटाने की बात ही थी, इसीलिए उसे निगेटिव रूप आया। गांधीजी अंग्रेजी हुकूमत के बारे में end or mend (सुधारो या खतम करो) कहते थे। परन्तु गांव-गांव में पड़े हुए भूमिमालिकों से हम end or mend नहीं कह सकते हैं। हमें mend ही करना है। उन सबका परिवर्तन करना ही हमारा औजार होगा, इसलिए जिस गहराई में उनका सत्याग्रह गया था, उससे अधिक गहराई में हमें जाना चाहिए।

भगवान् कृष्ण का अंबरावतार !

(विनोबा)

पूर्वजों का रिवाज था कि बारह बरस तक तप हो। इसलिए 'तप' का अर्थ ही 'बारह वर्ष' हो गया। गांधीजी ने १९२० में चरखे को पुनर्जीवित किया। उसके तीन तप के बाद अब अंबर चरखे के रूप में देश को एक ऐसा औजार मिला कि जिसके जरिये कुल देश आसानी से खद्दरपोश हो सकता है।

इसकी खोज में काफी लोग अपनी बुद्धि लगाते रहे। बापू ने इसके लिए इनाम जाहिर किया था कि गाँव में बन सकने वाला, वहीं दुरुस्त होने वाला, आसानी से चलाया जा सकने वाला और ज्यादा पैदावार देने वाला चरखा ईजाद हो। आज तक उसका शोध चला। जब बच्चों के हाथ में चरखा दिया नहीं जाता था, उस समय हम तकली पर ४०–४५ गज़ कपड़ा बना लेते थे और कहते थे कि छोटी-सी तकली ने कितना कपड़ा दिया। संस्कृत में कहावत है कि 'तेजस्वी पुरुषों के काम औजारों से नहीं, उनके पराक्रम से होते हैं। लेकिन उन्हें कोई अच्छा औजार भी मिलता है, तो उनके सामने कोई शत्रु टिक नहीं सकता।' तकली के जमाने में भी हम बाहर का कपड़ा खरीदते नहीं थे। अब तो यह ऐसा औजार हाथ आया, जिसे सब आसानी से इस्तेमाल करके पैदावार बढ़ा सकते हैं।

गलत सवाल

लोग पूछते हैं—'इससे भी दुगुना-तिगुना उत्पादन करने वाला औजार हो या उसे बिजली लगायी जाय, तो क्या हर्ज है ?" पर तरकारी में थोड़े नमक से ही रुचि आती है। यंत्र की शक्ति एक हद तक ही इस देश के लिए अच्छी है, अन्यथा वह पूरक नहीं, मारक होगी। कुछ पूछते हैं–"क्या यह कपड़ा मिल से टक्कर लेगा ?" यह सवाल ही गलत है। मिल के साथ स्पर्धा करने के लिए मिल ही खड़ी करनी होगी। हमारे देश में कौनसे औजार चल सकते हैं, यह निर्णय अपनी बुद्धि और हृदय से हमें करना होगा। हो सकता है, पाँच सौ साल के बाद लोग इसे पसंद न करें और फिर तकली व छोटे चरखे ही लें। अगर वे अधिक ध्यान-योग-परायण होंगे, तो तकली जैसा शांत औजार पसंद करेंगे। मनुष्य-बुद्धि का जितना विकास होता है, उतना वह शांत औजार पसंद करता है और तीव्र साधन बेकार होते जाते हैं।

ऐटम और हैड्रोजन की ओर जाने वाली सभ्यता ऐटम-हैड्रोजन के कारण ही नष्ट होने वाली है। याने वे उत्पादन के ही काम में लगेंगे और उनकी संहारक शक्ति खतम होगी। गाँव-गाँव में बाँटने योग्य भी उसका विकेन्द्रीकरण हो सकता है। उस हालत में दूसरी समाज-रचना होगी। पर वह आगे की चीज है। तब संभव है कि मनुष्य खाना भी हवा से प्राप्त करने की शक्ति पाये। आज हम धूप; हवा और आकाश से पोषण प्राप्त करके १३०० कैलारी का ही आहार लेते हैं।

यंत्र-वृद्धि का डर निरर्थक

कुछ लोग कहते हैं—"विज्ञान की वृद्धि के कारण दुनिया भर में मिलें ही दिखायी देंगी; क्योंकि वह यंत्रों की तरफ दौड़ रही है। लेकिन जो विज्ञान के साथ यंत्रों को जोड़ते हैं वे अवैज्ञानिक हैं, उनका दिमाग साफ नहीं है। विज्ञान याने सृष्टि-शक्ति का ज्ञान। जितना वह ज्ञान बढ़ेगा, उतने यंत्र भी बढ़ने ही चाहिए, ऐसी कोई बात नहीं है ; बल्कि यंत्रों की आवश्यकता कम हो, यह भी विज्ञान की ही प्रगति मानी जायगी। अभी तो न बौद्धिक शक्ति का और न मानसिक शक्ति का ही पूरा ज्ञान हमें हुआ है। जब इन दोनों शक्तियों का ज्ञान अर्थात् आत्मज्ञान और विज्ञान बढ़ेगा, तो यंत्र भी बढ़ेंगे ऐसी बात नहीं है।

खैर, हम आगे का न सोचें। अंबर आज हमारे लिए पर्याप्त है। यह गाँव को स्वावलंबी बना सकता है। स्वावलंबी समाज की किसीके साथ स्पर्धा नहीं हो सकती, इसलिए मिल के साथ इसकी स्पर्धा का कोई सवाल ही नहीं है।

गाँव की आजादी का चिह्न

"पुराने चरखे से ही यह काम क्यों न किया जाय ?"—ऐसा पूछा जाता है। अपने जीवन का कितना हिस्सा किस काम में देना चाहिए, इसका कुछ हिसाब होता है। इस हिसाब से उस चरखे के लिए जितना समय देना पड़ता था, वह आज के समाज के लिए ज्यादा है। अंबर चरखे के लिए कम समय देना पड़ता है।

इसे हम गाँव की आजादी के चिह्न के तौर पर देखें। देश की आजादी के लिए हमने परदेशी माल का बहिष्कार देश को अपने पाँवों पर खड़ा करने की दृष्टि से किया। उसी तरह ग्रामराज के लिए बाहर के कपड़े का बहिष्कार होगा और ग्राम अपने पाँव पर खड़े होंगे। इसमें किसीका द्वेष नहीं है।

सरकार तो जनता है

"सरकार अगर इसे मदद न करे तो क्या होगा ?"–यह भी पूछा जाता है। क्या कोई मालिक यह प्रश्न करेगा कि मेरा नौकर नहीं मानता है, तो क्या किया जाय ? उसे हटा कर दूसरा रखा जाय। मालिक जनता है। "सरकार इसे मदद नहीं देगी, तो अंबर नहीं टिकेगा," यह कहने के बजाय "सरकार नहीं टिकेगी," यह कहना ठीक होगा।

ऐसी ताकत हमें निर्माण करनी होगी। वह निर्माण न हो, तो न अंबर चरखा बचायेगा, न और कोई साधन। जो मानते हैं कि मिल के बिना देश का उद्धार नहीं हो सकता, उनके लिए अंबर चरखा मामूली औजार है। इसलिए इसकी जिम्मेदारी हम पर है, सरकार पर नहीं। दिमाग में कुछ अच्छाई है, इसलिए बेकारी हटाने के

'मैं' को 'हममें' बदलें

व्यक्तिगत मालकियत का ख्याल लोग जब तक नहीं छोड़ते, तब तक देश की उन्नति नहीं हो सकती। यह विचार भारतीय संस्कृति की ही देन है, कोई नयी बात नहीं है। हमारे पूर्वजों ने हमें सिखाया है–"मैं और मेरा यह भावना नहीं, 'हम' और 'हमारा' यह भावना होना चाहिए।" उसके लिए एक उपाय, तत्त्वज्ञान भी है, जिसमें हम सब कुछ भगवान् को अर्पण कर देते हैं। लेकिन यह बहुत बड़ी बात है। छोटी बात यह है कि 'मैं' का 'हम' और 'मेरा' का 'हमारा' करना। इस तरह से हम अपनी भावना को और वासना को सामूहिक रूप देंगे, तो हम ममता से छूट सकते हैं।

नेरोंजीपेट, कोइंबतूर, २८–८–५६ —विनोबा

www.vinoba.in

लिए इसको वह चाहती है। वह मानती है कि पाँच-सात साल के बाद दूसरा काम लोगों को दे सकेंगे। लेकिन दस साल के बाद इसकी अधिक आवश्यकता ही महसूस होगी, क्योंकि जमीन का रकबा कम ही होने वाला है। हम दृढ़ विश्वास से अंबर को अपनायें, और पुराने चरखे के पीछे जो बल था वह इसे दें, तो यह पूर्ण यश देगा, इसमें हमें संदेह नहीं है।

मेहमान अंबर चरखे को स्थान देना जरूरी

अम्बर चरखा अभी एक संकट से मुक्त हुआ, नहीं तो जन्म के पहले ही उसकी मृत्यु हो जाती, क्योंकि सर्व-सेवा-संघ में आने के बाद वह पास होगा कि नहीं, यही सवाल उठा। हमारे यहाँ सब लोग स्वतंत्र बुद्धिवाले होते हैं। यह सर्वोदय की खूबी है कि उसमें हर एक शख्स स्वतंत्र बुद्धिवाला होता है, फिर भी हम चाहते हैं कि उसमें सब बात एकमत से हो। अभी अम्बर चरखा एक प्रकार का यन्त्र बन गया है, इसलिए उसको मान्यता देना या नहीं देना, वह उचित है या अनुचित है, यहाँ से चर्चा शुरू हुई थी। आज भी मत-भेद जारी है। हम भी कहते हैं कि पुराने चरखे की जगह यह चरखा नहीं ले सकेगा। यह ठीक है कि मेहमान को हम अपने भोजन-घर में नहीं ले जाते। लेकिन मेहमान को घर के अन्दर तो ले जायेंगे, या नहीं? जिस तरह हम बड़ी फजर ढाई बजे उठ कर पहला काम सूत कातने का करते हैं, उस चरखे की जगह अम्बर चरखे को मिलने वाली नहीं है। परन्तु हम दिन में कातने के लिए अम्बर चरखे का उपयोग कर सकते हैं। दिन में उसको काफ़ी अवकाश है। तो, यह एक बड़ा सुन्दर शस्त्र हमारे हाथ में आ गया। आप सब लोग एक बात याद रखिये। हम हमेशा "सीताराम, सीताराम" नाम लेते हैं; सिर्फ राम का नाम नहीं लेते हैं। इसमें सीता है भूमिदान। वह भूमि से ही निकली थी न? और राम है ग्रामोद्योग। किसीने पूछा कि राम, सीता तो है, लेकिन हनुमान कौन हैं? आजकल हम हनुमान के तौर पर आर्यनायकमजी का नाम लेते हैं। याने यह नयी तालीम हमारा हनुमान है; यह अम्बर चरखा हमारा परम दोस्त है।

भगवान् कृष्ण ने कितने अवतार लिये थे—मछली, कछुवे, सुअर इन सबके अवतार के साथ एक दफ़ा उन्होंने अम्बरावतार भी ले लिया था। यह अम्बरावतार कौन है, यह बहुतों को मालूम नहीं है। द्रौपदी के लिए भगवान् ने 'अंबरावतार' लिया था। दुःशासन द्रौपदी का एक-एक कपड़ा लेता जाता और भगवान् द्रौपदी को एक-एक कपड़ा देते जाते। भगवान् श्रीकृष्ण का मामूली रूप उस वक्त काम नहीं देता था, इसीलिए उन्होंने कपड़े का ही रूप ले लिया। हमको लगता है कि यह अम्बर चरखा अम्बरावतार है। यह सचमुच देश को बचायेगा। अतः उसका अच्छी तरह पालन-पोषण करना चाहिए। 'भूदान-यज्ञ' में काम करने वालों का यह काम है कि वे इसके लिए लोगों में रुचि पैदा करें।

हमारी वाणी में बहुत ताकत है, परन्तु उतनी शक्ति हमारे हाथ में नहीं है। इसीलिए हाथ से तो भूदान का काम करते चले जायँ, परन्तु वाणी में यह सब होना चाहिए—अम्बर चरखा, छुआ-छूत का भेद मिटाना, जाति-भेद को तोड़ना, ग्रामोद्योग-खादी का प्रचार करना इत्यादि सभी बातों का हमारी वाणी के द्वारा प्रचार हो सकता है, क्योंकि वाणी की शक्ति की कोई सीमा नहीं है।

सब-अंगों का उपयोग करें

गांधीजी ने हमें मच्छी-मार-विद्या भी सिखायी है। उन्होंने हमारे हाथ में अनेक प्रकार के जाल दिये हैं। कोई मछली एक जाल में नहीं आयेगी तो दूसरे में आयेगी। अगर भूदान के जाल में नहीं आती है, तो खादी के जाल में आयेगी। अगर उसमें भी नहीं आयी तो आखिर गुड़ के जाल में तो आयेगी कि नहीं? इसीलिए इस दुनिया में हम बिलकुल अपराजित हैं। हमारा कभी पराजय हो नहीं सकता है। जहाँ भी हम जायँगे वहाँ हमारी जीत ही जीत है, क्योंकि हमारे पास वह गुड़ है जिसको महात्माजी ने अहिंसा का नाम दे दिया। हम लोगों को अहिंसा रूपी गुड़ खिला देंगे, तो हमारा बहुत काम होगा। इसीलिए आप भूदान के काम के लिए जायँगे, तो एकांगी बन कर नहीं जायँगे। ये सब हमारे अंग हैं, इनको लेकर हम जायँगे। यह अष्टभुजा देवी है। उसके एक हाथ में एक शस्त्र है, तो दूसरे हाथ में दूसरा शस्त्र है। हमारे देवता भी कैसे होते हैं; उनके एक हाथ में गदा रहती है, तो दूसरे हाथ में फूल रहता है। सब हाथ में गदा ही गदा रहेगी तो कैसे चलेगा? फिर कोई भक्त नज़दीक ही नहीं आयगा। इसीलिए दूसरे हाथ में हमारे देवता कमल भी रखते हैं। इस तरह यह भूदान हमारी गदा है और गुड़ हमारा फूल है। शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी हम विष्णु भगवान् हैं। इसीलिए लक्ष्मी तो हमारे नहीं चाहते हुए भी हमारे पास आयेगी। हम कितना भी नहीं चाहेंगे, तो भी लक्ष्मी हमारे पास आयेगी। और इसमें कोई शक नहीं है कि जमीन लोगों के हाथ से छूट रही है। इसीलिए प्रेम से लोगों के पास जायेंगे, तो बिलकुल आसानी से वह हमारे पास आयेगी।

हमको खुशी हुई कि यह परिषद् यहाँ हुई और वैकुंठभाई उसमें आये। उनके पीछे बहुत काम होते हैं और वे काम कुछ तकलीफ़ देने वाले भी होते हैं। इधर उनको डर लगता है कि सर्व-सेवा-संघ वाले हमारी बात पास करते हैं या नहीं, उधर उनको डर लगता है कि सरकार उसको कबूल करती है या नहीं। इस तरह दोनों के बीच वे मार खाते हुए काम करते हैं। परन्तु अपनी तरफ से हम उनको तथा और सब लोगों को निर्भय बनाना चाहते हैं। हम सिद्धांत की कितनी भी ऊँची-ऊँची बातें करेंगे, तो भी लोगों में जाकर जिस प्रकार की जो भी उचित सेवा हो सकेगी, वह करने के लिए हम तैयार हैं। इसलिए सब रचनात्मक कार्यकर्ताओं को हम अपनी तरफ से निर्भय बनाना चाहते हैं। जिससे जितना हो सकता है, उतना वह करे और वह कार्य हमको प्रिय है। *

* ता० १५-१० बजाजनगर और ता० १८-१० गांधीनगर (तिरुपुर) के ग्रामोदय-संघ-संमेलनों के भाषणों से।

क्रांति और संस्थाएँ

(धीरेंद्र मजूमदार)

प्रश्न :—क्या कारण है कि सभी छोटी-बड़ी, नयी-पुरानी संस्थाओं के रैंक और फाइल में नेतृत्व के प्रति असंतोष है?

धीरेंद्रभाई :—अपने को क्रांतिकारी और प्रगतिशील मानने वाले कार्यकर्ताओं को संस्था में जो असंतोष होता है, उसका प्रमुख कारण यह है कि वे संस्था में पूर्ण क्रान्ति देखना चाहते हैं। वे यह नहीं समझते कि क्रांति संस्था द्वारा ही नहीं होती। संस्था क्रांति के लिए आवश्यक जरूर है, बिना संस्था की मदद के क्रांति की गाड़ी को आगे बढ़ाने में कठिनाई होगी। भक्त की आराधना के लिए मंदिर सहायक होता है, लेकिन मंदिर के पुजारी सब भक्त नहीं हो पाते हैं। आजादी की लड़ाई में रचनात्मक संस्थाओं का बड़ा हाथ था, परन्तु हमने साफ देखा कि क्रांति की बागडोर या नेतृत्व व्यक्तियों के हाथ में था। इस बुनियादी तथ्य को जो नहीं समझते, उन्हें असंतोष होता है। लेकिन जो वास्तविक क्रांतिकारी हैं, उन्हें इन बातों से असंतोष नहीं होता।

दूसरे, गुलामी के कारण मुल्क का चरित्र भी राग-द्वेष-प्रधान हो गया है। अच्छे-से-अच्छे लोग इस मर्ज के मरीज हैं। जहाँ आर्थिक विषमता है, वहाँ उसे लेकर या जहाँ नहीं है, वहाँ पद को लेकर—जैसे यह आचार्य है, व्यवस्थापक है, संचालक है आदि। परनिन्दा और आत्मस्तुति का हमारा स्वभाव बन गया है। इसलिए जो छोटा है, वह बड़ा होना चाहता है।

प्रश्न :—इस समस्या का क्या कोई समाधान भी है?

धीरेंद्रभाई :—जब स्वराज्य-आंदोलन बुलंदी पर रहता था, संकट की घड़ियाँ थीं, अनेकों मुसीबतों का सामना करना पड़ता था, तो हम लोग सारे दोषों को भूल जाते थे। कंधे से कंधा मिला कर काम करते थे। इससे आपस में एक-दूसरे के प्रति बड़ा गाढ़ा प्रेम पैदा हो जाता था। अतः इस कमजोरी से मुक्त होने के लिए प्रमुख तरीका है, **आंदोलन तीव्र हो, भरण-पोषण की जिम्मेदारी किसी अन्य पर न रह कर कार्यकर्ता पर ही हो।** इसीसे जीवन में सादगी और तपस्या आयेगी, आत्मज्ञान का भान होगा। कार्यकर्ताओं को समय-समय पर बिना किसी 'ऐजेन्डा' के एकत्र होना चाहिए और गप्प लगानी चाहिए। इससे भी लाभ होता है और टीम बनने में मदद मिलती है। आजकल संस्थाओं में यह नहीं होता है।

प्रश्न :—ऐसी दयनीय हालत में तो सर्वोदय बहुत दिनों में होगा?

धीरेंद्रभाई :—ऐसी बात नहीं होगी। जहाँ धर्म की अधिक ग्लानि होती है, वहीं अवतार होता है। जहाँ की हालत अधिक गिरी और दयनीय है, वहीं सर्वोदय शीघ्र होगा।

(प्रेषक—रामवृक्ष शास्त्री)

सारा समाज न भय के कारण, न लोभ के कारण, बल्कि प्यास के लिए जब शांति चाहेगा तब सर्वोदय होगा। —विनोबा

---

www.vinoba.in

सबसे बड़ा संकट: स्व-नियमन का अभाव

(आचार्य तुलसी)

"जिसकी चाह नहीं है, उसकी राह सामने है; और जिसमें चाह है, उसकी राह नहीं है। आज का मनुष्य विपर्यय की दुनिया में जी रहा है। चाह सुख की है, कार्य दुःख के हो रहे हैं। चाह शान्ति की है, अणु-अस्त्र के प्रयोग चल रहे हैं।

भगवान् महावीर ने कहा–दुःख हिंसा-प्रसूत है, दुःख आरम्भ-प्रसूत है। इन शब्दों में वर्तमान की कठिनाइयों का संग्रह है। हिंसा का पहला प्रसव है—वैर-विरोध, दूसरा भय और तीसरा दुःख।

आरम्भ का पहला प्रसव है—संग्रह, दूसरा वैषम्य और तीसरा दुःख।

किन्हीं को अति-भाव सता रहा है और किन्हीं को अभाव। अतिभाव के पीछे संरक्षण का रौद्र-भाव है और अभाव के पीछे प्राप्ति की आर्त वेदना। सुख का हेतु अभाव भी नहीं है, अति-भाव भी नहीं है। सुख का हेतु स्वभाव है। मनुष्य अपने स्वभाव से जितना दूर हटता है, उतना ही अति-भाव पदार्थ का अति-संग्रह करने लगता है। पदार्थ से दूर हटने का मतलब है स्वभाव की ओर गति। स्वयंकृत अभाव में स्वभाव का दर्शन निकट से होता है। अभाव विवशता से होता है, वह दुःख देता है। पदार्थ का अभाव हो–यह कोई कैसे चाहेगा? अति-भाव की चाह होती है, पर वह करनी नहीं चाहिए। यथा-भाव की विषमता समाज-व्यवस्था में है। जो नहीं होना चाहिए उसके निवारण की क्षमता त्याग या व्रत में है। अणुव्रत का संदेश यही है—जो नहीं होना चाहिए, उससे दूर रहो। यह व्यवस्थाओं की स्वयंस्फूर्त व्यवस्था है। सुख का हेतु अहिंसा या मैत्री है। उसका आधार अनपहरण है। जो व्यक्ति दूसरों के 'स्व' का कभी हरण नहीं करता, वह सबका मित्र है। सुख की दृष्टि बाहरी पदार्थों से बँधी हुई है। यह भूल है। इससे मानसिक असमाधि बढ़ती है। भगवान् ने कहा–महा-आरम्भ नरक का हेतु है। नरक कोई माने या न माने, वह आगे की बात है, किन्तु इससे दुर्गति होती है, इसमें कोई संदेह नहीं। महा-आरम्भ का उद्देश्य महा-परिग्रह है। महा-परिग्रह का उद्देश्य है–महा-योग या महा-विलास। क्रम यों हुआ–महा-विलास के लिए महा-परिग्रह और महा-परिग्रह के लिए महा-आरम्भ। जिसका मूल दुर्गति है उसके पत्र–पुष्प में सुरभि कहाँ से होगी? महा-आरम्भ को आज की भाषा में बड़ा उद्योग या बड़ा व्यापार कहा जा सकता है।

राष्ट्रीय दृष्टि से बड़े-बड़े उद्योगों और व्यापारियों को महत्त्व मिलता होगा, प्रोत्साहन भी मिलता होगा, मुझे पता नहीं। मैं चरित्र-शुद्धि की दृष्टि से कहता हूँ। सुख और शान्ति की दृष्टि से महा-आरम्भ और महा-परिग्रह आदरणीय नहीं है—यह ऋषिवाणी है। निष्ठापूर्वक आरम्भ और परिग्रह के अल्पीकरण से सुख-शान्ति का विकास होता है, यह अनुभवगम्य भी है।

जिस मार्ग में जो स्वयं स्पष्ट होता है, वही उसकी प्रेरणा देने का अधिकारी है। दीये से दीया जलता है। दृष्टि से दृष्टि मिलती है। भारतवर्ष में दृष्टि के सम्यक्करण का बहुत महत्त्व रहा है। यह आत्म-दर्शी ऋषियों की लम्बी परम्परा है। आरम्भ, परिग्रह और भोग से दूर रह कर उन्होंने जो सत्य पाया, समाधान पाया, सुख और शान्ति का अनुभव पाया वही उन्होंने शब्दों में गूथा। उसका सार है–तप और संयम। तपस्वी और संयमी जीवन ही उत्तम जीवन है।

भोग-प्रधान जीवन में पदार्थों से समृद्ध जीवन ही उच्च जीवन है। त्याग-प्रधान परम्परा इस मानदण्ड को स्वीकार नहीं करती। सादगी और सरलता गरीबी की उच्चता नहीं है, किन्तु त्याग की महिमा है। धन से मन को समाधान नहीं मिलता। मानसिक समाधि के बिना शान्ति नहीं। हमारा शान्ति सूत्र है–द्वंद्व-उपरत। भोग-प्रधान में द्वन्द्व ही परम पुरुषार्थ है।

जी चाहता है कि मन की सारी अनुभूति सबके गले उतार दूँ। कुछ बनता भी है, नहीं भी बनता। नहीं से अच्छा ही है कि कुछ बनता है। नव-निर्माण सरल नहीं होता। जीवन के मूल्य बदलने हैं। मूल्यांकन की दृष्टियाँ बदलनी हैं। वे नहीं बदल रही हैं। जो नहीं बदलने का है, वह बदल रहा है। अनुशासन की कमी, विनय की परम्परा का उन्मूलन, त्याग के प्रति अश्रद्धा, स्वार्थ की प्रचुरता, ये नहीं बढ़ने चाहिए और ये ही बढ़ रहे हैं। उद्दण्डता बढ़ रही है। पुलिस की गोली चलने का क्रम बढ़ रहा है। शासन का नियंत्रण बढ़ रहा है, स्व–नियमन का अक्रम हो रहा है। यही क्रम चला, तो एक दिन सब स्वयं को खतरे में पायेंगे।

स्व-नियमन की कमी दीखती है, तब सभी को दुःख होता है। शासक भी पछताते हैं तथा और लोग भी। किन्तु कोरे पछतावे से क्या होगा स्व-नियमन की परम्परा को छोड़ कर दूर भागने का क्रम तोड़ना होगा। राजनीतिक चेतना के बहाव में सारी बातें गौण हो रही हैं। यह सबसे बड़ा संकट है।

राजनीतिक प्रभुत्व अति मात्र बढ गया है। जीवन का प्रत्येक क्षेत्र उससे आक्रान्त है। स्व-नियमन पर यह आघात है। पूंजी, सत्ता और आधार के केन्द्रीकरण से सन्तुलन मिट जाता है।*

* अणुव्रत–आंदोलन के सप्तम् अधिवेशन, सरदारशहर का मंगल प्रवचन।

अहिंसा का विश्वीकरण

(शंकरराव देव)

सर्वत्र और सदैव धर्म का प्रचार और आचरण होने के बावजूद जिस तानाशाही के पास एटम बम और हैड्रोजन बम जैसी संहारक शक्ति ही अन्तिम निर्णायक शक्ति है ऐसी तानाशाही के हाथ में मानव का भविष्य क्यों रहे? जब तक इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता है, तब तक सच्ची शांति प्राप्त नहीं हो सकती। क्या धर्म के पास इसका कोई जवाब है? धर्म के बिना यह संसार क्षण भर भी नहीं टिक सकेगा, यह स्वयंसिद्ध सत्य है। परन्तु जिस धर्म का आचरण मंदिर में या मसजिद में चार दीवारों के भीतर होता है, वह धर्म यह धर्म नहीं है। मेरा अभिप्राय उस धर्म से है जिस धर्म से समाज की धारणा होती है, जिसको मैं सामाजिक धर्म कहता हूँ। वही सच्चा धर्म है। और सच कहा जाय तो उस धर्म का आचरण मंदिर में नहीं, बाज़ार में होना चाहिए। मंदिर में जिस धर्म का आचरण किया जाता है, वह भले ही हजारों लोगों द्वारा एकसाथ किया जाता हो तो भी वह वैयक्तिक धर्म ही है। बाज़ार में जिस धर्म का आचरण किया जाता है वह चाहे एक ही व्यक्ति के द्वारा क्यों न किया जाता हो, तो भी वह सामाजिक धर्म है। हम लोगों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि समाज में व्यक्तियों के परस्पर-व्यवहार में जिस धर्म का आचरण होना चाहिए वह है—सत्य, अहिंसा, अस्तेय इत्यादि। आज तक दुनिया में जितनी महान् विभूतियाँ हुई हैं, उनमें महात्मा गांधी का खास महत्त्व इसलिए है कि उन्होंने इस सामाजिक धर्म की ओर सबका ध्यान आकर्षित किया। प्रत्येक सामान्य मनुष्य के लिए यह सामाजिक धर्म नित्य-धर्म बनना चाहिए, ऐसा आग्रहपूर्वक प्रतिपादन किया और उन्होंने अपना सारा जीवन इस सिद्धान्त के प्रतिपादन की पुष्टि करने के लिए सत्य और अहिंसा के प्रयोग करने में व्यतीत किया।

इसका अर्थ यह नहीं है कि गांधीजी व्यक्तिगत धर्म की ओर ध्यान ही नहीं देते थे। अभिप्राय यह है कि उन्होंने सत्य, अहिंसा आदि सामाजिक धर्म की ओर मुख्य रूप से ध्यान दिया और अपनी ताक़त लगायी। जिस धर्म का आचरण मुट्ठी भर असामान्य व्यक्तियों द्वारा ही हो सकता है, ऐसा माना जाता था, उसको उन्होंने अखिल मानव समाज के धर्म के रूप में प्रतिष्ठा दिखायी। यह कहने में कोई हर्ज नहीं है कि उन्होंने एक प्रकार से सत्य और अहिंसा का सामाजीकरण या विश्वीकरण किया। उसी कारण उन्होंने यह प्रतिपादन किया कि मानव का आर्थिक और राजकीय जीवन सत्य और अहिंसा पर आधारित होना चाहिए। प्रतिपादन के साथ-साथ उन्होंने इसके लिए महान् प्रयोग भी किये।

हम लोगों में से प्रत्येक अन्तर्मुख होकर अपने मन से पूछे कि सत्य, अहिंसा इत्यादि तत्त्वों पर आधारित आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और शैक्षणिक जीवन का स्वरूप किस प्रकार का होगा, किस प्रकार का रह सकेगा? गांधीजी के चरण-चिह्नों पर चलते हुए हम लोगों को भी अपना जीवन सत्य की एक प्रयोगशाला बना लेना चाहिए। जब तक हम ऐसा नहीं करेंगे, तब तक मनुष्य को शांति और सुरक्षा उपलब्ध नहीं होगी। आज भूदान-आन्दोलन के रूप में आर्थिक क्षेत्र में विनोबाजी यही प्रयोग कर रहे हैं। जो लोग अपने आप को धार्मिक समझते हैं और कर्मकांड का आचरण करते हैं, वे लोग इस दिशा में गम्भीर विचार नहीं करते हैं। इसीलिए आज समाज में भिन्न-भिन्न रूप में आर्थिक और अन्य प्रकार का शोषण जारी है। शोषण यानी हिंसा। हमारी वर्त्तमान जीवन-पद्धति और रहन-सहन शोषण यानी हिंसा पर आधारित है। हम अपने जीवन में हिंसा कायम रखते हुए यदि जागतिक हिंसा को रोकने का प्रयत्न करेंगे, तो क्या उसमें हमको सफलता मिलना सम्भव है? यह बात हमारे ध्यान में कब आयेगी कि नवसमाज के निर्माण का अर्थ ही अहिंसा पर आधारित नयी सभ्यता का निर्माण है? जिस दिन यह बात हमारे ध्यान में आयेगी, उसी दिन गांधीजी के जीवन का मर्म हम समझ सकेंगे।

("प्रबुद्ध-जीवन" से साभार)

www.vinoba.in

खादी की दृष्टि

(विनोबा)

बापू के समय से रचनात्मक कामों में समग्रता लाने का प्रयत्न चलता आया है, लेकिन कपड़ों के छोटे-छोटे टुकड़ों को सीकर नहीं, सूत को बुनकर ही कपड़े का थान बनता है। समग्रता में सिलाई नहीं, बुनाई ही चाहिए। वह अन्तरंग-एकता की बात है, बहिरंग-संयोग की नहीं। मिट्टी के कणों ने मिल कर घड़ा बनाया, कणों के संयोग से वह नहीं बना। वह एक ऐसा रूप हुआ कि मिट्टी का भी रूप बदल गया।

आंशिक सेवा-कार्य : समग्रता की कलाए

रचनात्मक काम अलग-अलग रूपों में शुरू हुए। फिर भूदान आया। लोगों ने उसका स्वागत किया। दूसरे रचनात्मक कामों के साथ उसे जोड़ने का तय हुआ, पर समग्रता नहीं लायी गयी।

रचनात्मक काम करने वाले जितनी ताकत रखते हैं, उतनी ताकत कोई दूसरा राजनीतिक पक्ष या संस्था नहीं रखती; क्योंकि कुल समय इसी काम में लगाने वाली बड़ी जमात इन्हीं में है। लेकिन फिर भी इनका अलग-अलग चिंतन नहीं मिटा है। इन दिनों हर एक अवयव का अलग-अलग विशेषज्ञ डॉक्टर होता है, जिसका कुछ उपयोग भी होता है, परन्तु उससे पूरा काम नहीं हो पाता, क्योंकि शरीर कोई ऐसी मोटर तो नहीं है, जिसे कि पचास अवयवों को इकट्ठा करके बनाया जा सके। आज कोई ग्रामोद्योगों के, कोई हरिजन-कार्य के, कोई गो-सेवा के 'एक्सपर्ट' हैं। कांचीपुरम्-संमेलन में हमसे कहा गया कि गाय का नाम तक वहाँ नहीं निकला। हमने कहा—'बच्चा माँ का नाम नहीं लेता है, उसका काम करता है।' भूदान के आधार पर ही गाय की रक्षा हो सकती है। खैर, तो सारे गाँव का उदय कैसे हो, यह हमें सोचना है। उसमें अलग-अलग चीज़ें तो आयेंगी, लेकिन वह एक स्वतंत्र कला होगी—जीवन बनाने की, विचार बदलने की। वह हृदय-परिवर्तन की बात है।

बहिरंग संयोग नहीं, अंतरंग-एकता चाहिए

गाँधीजी के अनुयायी यह समझते हैं कि हमको दूसरे का हृदय-परिवर्तन करना है। इससे अधिक ग़लत विचार हो नहीं सकता। हम दूसरे का हृदय-परिवर्तन कहाँ तक कर सकेंगे, यही चर्चा दोनों पक्षों में चलती है। एक कहता है कि यह जरूर हो सकेगा। दूसरा कहता है कि उसकी मर्यादा है, उससे ज्यादा नहीं होगा। लेकिन दोनों पक्ष उसका असली अर्थ भूल जाते हैं। उसका असली अर्थ यही है कि हमारा निज का ही हृदय-परिवर्तन अभी करना बाकी है। हमको लगता है, हृदय-परिवर्तन याने हमेशा सामने वाले का, दुश्मन का, दुर्जन का हृदय-परिवर्तन। लेकिन यह दुश्मन और दुर्जन यहीं, हमारे हृदय में ही छिपा बैठा है। वह कभी-कभी प्रगट हो जाता है, परंतु हम उसकी ओर ध्यान नहीं देते हैं। परिणाम यह आया कि एक जमाने में खादी जो आदर-भाजन थी, वह बीच में तिरस्कार-भाजन तक हो गयी। छाती पर तो खादी आ गयी, लेकिन वह भीतर नहीं गयी। सिर के ऊपर आ गयी, लेकिन सिर के अंदर नहीं गयी। ऐसा क्यों हुआ, यह हमको देखना चाहिए। इन दिनों थोड़ा खद्दर का बोलबाला चल रहा है। कुछ आवाज आ रही है, कुछ नक्कारा बज रहा है। यह डंका इसलिए बजता है और आवाज़ इसलिए आती है कि वह पोला है। हवा अंदर भरी है, परंतु वह ठोस चीज़ की आवाज़ नहीं है। जो पोला बाजा होता है, उसमें से जोरों से आवाज तो आती है, लेकिन उसके भीतर कुछ जान नहीं होती है। इन दिनों खादी की आवाज आ रही है, क्योंकि उसमें हवा भरी है। वह हवा है सरकार का प्रोत्साहन। क्या यह प्रोत्साहन गलत है? नहीं। यद्यपि जैसा चाहिए, वैसा काम सरकार नहीं कर रही है। फिर भी वह कोई गलत काम नहीं कर रही है, क्योंकि जितनी उसकी श्रद्धा है, उतना वह कर रही है। लेकिन हम उसमें बहे जा रहे हैं। उससे समग्रता क्षीण होती है। अंदरवाली तो समग्रता दूर रही—यह जोड़ने वाली सिलाई की समग्रता भी नहीं बन रही है। कम्यूनिटी प्रोजेक्ट, खादी-बोर्ड, वीविंग डिपार्टमेंट आदि चलते हैं। उनका अलग-अलग चिंतन होता है और कभी उनके सहयोग की भी योजना कर लेते हैं। फिर उसका हिसाब बनता है कि सरकार को कितना घाटा आया। हर साल उस पर चिंतन चलता है कि क्या इस पर इतना खर्च करना ठीक है? तो "हाँ भाई, जब बेकारी का असुर इतनी माँग कर रहा है, तो फिलहाल मदद कर दो।" ऐसा जवाब देकर काम जारी रखते हैं। कभी पूछते हैं, "इस बार कुछ कम मदद लेंगे?" हम यह भी कबूल कर लेते हैं। सारांश, आवाज तो बड़ी चल रही है, लेकिन भीतर पोलापन है, जान नहीं है। जीवन-परिवर्तन नहीं हो रहा है।

स्वाभिकता हो, तो कला खिलेगी

खादी का आजकल बहुत बखान होता है, तो हम जरा घबड़ा जाते हैं। कहते हैं—"खादी में कितनी प्रगति हो गयी है? मिल से मुकाबला करती है।" एक ज़माने में देखते ही पहचान होती थी कि यह खद्दरपोश है, लेकिन अब देव है या असुर पहचाना नहीं जाता! खद्दर तो सादे जीवन का प्रतीक है। शौकीनी के लिए सुंदर खादी पहनने वाले तो उसे पेट्रनाईज (संरक्षण) करते हैं। इससे उत्पादन के लिए प्रोत्साहन तो मिलता है, लेकिन उसमें जान नहीं रह पाती। यहाँ ४००–५०० नम्बर तक का सूत निकलता था। उस कला की बहुत प्रशंसा हमने सुनी थी। लेकिन उसका कोई असर हम पर नहीं हुआ था, क्योंकि उस खद्दर में कोई जान नहीं थी। अगर होती, तो वह जाती ही नहीं। मिट्टी के शरीर का इतना शृङ्गार ही क्यों? ४०० नम्बर के सूत की खादी मुर्शिदाबाद के नवाब पहनते थे और बनाने वाले को खूब पैसा मिलता था। जिंदगी का क्षण-क्षण चिंतन करते, बारीक सूत निकाले, नवाब की रानी उसे पहने; और उससे हम अपने को सार्थक मानें; क्योंकि हमें उसमें पैसा मिलता है, तो वह पैसे का प्रेम था, खादी का नहीं। ऐसा कह कर मैं कला का निषेध नहीं कर रहा हूँ।

एक दफा हम एक भाई के घर में गये थे। वहाँ एक सुन्दर ऑइल पेंटिंग था। वे बोले कि कैसा सुंदर है? मैंने कहा कि सुंदर तो है, लेकिन कृत्रिम मालूम होता है। तो उन्होंने पूछा कि स्वाभाविक सुंदरता क्या होती है। फिर मैंने उनसे पूछा कि उस पेंटिंग का क्या खर्च हुआ। उन्होंने २००) बताया। मैंने कहा, आप जरा रोज सुबह घूमने के लिए निकलिये। गाँव के बाहर हरिजन बस्ती और गरीब की बस्ती होती है। वहाँ १०–५ मिनट उन लोगों से बातें करते रहिये। वहाँ आपको कई बच्चे फीके गालवाले दीख पड़ेंगे। रोज सुबह एक-डेढ़ पाव दूध वहाँ लेते जाइये और उन बच्चों में से किसी एक बच्चे को वह पिलाइये। दो-तीन महीने के बाद उस बच्चे के गाल का रंग देखिये, तो आपके इस ऑइल पेंटिंग से ज्यादा सुंदरता उसमें दिखेगी और वह सौंदर्य भी स्वाभाविक होगा। फिर भी हम कहना चाहते हैं कि हम ऑइल पेंटिंग का निषेध नहीं करना चाहते। हर चीज़का स्थान होता है, परन्तु हर चीज़ में क्रम का भी महत्त्व होता है। बिना क्रम के महत्त्व की चीज़ परिणाम ग्रहण नहीं कर सकती। हमने चूल्हा सुलगाया, उस पर एक बरतन रखा, बरतन में पानी डाला और उसके बाद उसमें चावल डाला, तो उसमें से सुंदर चावल पक गया। याने यह एक परिणाम आया। मान लीजिये कि पहले हमने चूल्हा सुलगाया और उसके बाद उस पर पानी डाला इसके बाद चावल डाला और फिर उस पर बर्तन रखा, तो क्या इस तरह चावल बनेगा? वही चार चीज़ें हैं, परन्तु क्रम में फरक पड़ा, तो परिणाम बदल गया। जब क्रम बदलता है, तब परिणाम बदलता है। "क्रमान्यत्वं परिणामान्यत्वे हेतुः।" बच्चों के गाल पर अगर लाल रंग आ गया है, तो उसके बाद हम पेंटिंग बना सकते हैं। लेकिन उसके पहले ऑइल पेंटिंग बनाने को हम वल्गैरिटी (घृणास्पद) कहेंगे।

प्रवृत्ति अंतरंग-पोषक हो

हमारे पास कम्यूनिटी प्रोजेक्टवाले आकर कहने लगे—'हम हिंदुस्तान के सारे गाँवों को 'कवर' करेंगे।' मैंने पूछा, उस 'कवर' के नीचे जानदार प्राणी होगा या लाश? ठंड से बचने के लिए भी जिंदा मनुष्य 'कवर' ओढ़ लेता है और लाश को भी वह ओढ़ाया जाता है। कुछ उत्पादन हुआ और पैसा बढ़ा, तो उससे देश की उन्नति नहीं होगी, बल्कि चरित्र और नीति बढ़ने से होगी। एक गाँववाले आकर कहने लगे, "हमारे गाँव में पैसा बढ़ जाने से झगड़े भी बढ़ गये।" अमेरिका में क्या कम पैसा है? पर क्या उसके अनुसरण से हम सुखी होंगे?" तो योजना में अंतरात्मा का भी थोड़ा विचार होना चाहिए। ऊपर से हिंदुस्तान को धनी बनाने की योजना बने, तो उससे हृदय में कोई फरक नहीं पड़ेगा। प्रोजेक्ट-एरिया में भूदान तो खैर पहुँचा ही नहीं। लोकल काम करने वाले यहाँ तक कहते थे कि "गाँव के बड़े लोगों के सहयोग से योजना चलती है। इसलिए वे नाराज न हों, इस ढंग से काम करना पड़ता है।" इन दो सालों में कुछ फरक तो पड़ा है। वे लोग खास कर मद्रास में भूदान के काम में भी अब दिलचस्पी रखने लगे हैं। कांचीपुरम् में जब हमने ग्रामोद्योग, नयी तालीम, जातीयता-निवारण आदि की बात कही, तो लोगों ने कहा, आखिर यह गुमराह अब रास्ते पर आ गया। हमने उसे एक कहानी सुनायी—एक किसान खेती में लगा रहा, दूसरा कुछ उसने किया नहीं। एक बार दो-तीन साल तक बारिश ही नहीं हुई। खेती चौपट हो गयी। तो फिर वह खेती छोड़ कर कुआँ खोदने लगा। उसका मित्र पूछता है, "क्या खेती छोड़ दी?" किसान क्या कहेगा?

www.vinoba.in

कुआँ खोदेंगे तभी खेती को पानी मिलेगा न ? लोग भूल जाते हैं कि तीस साल तक हमने खादी का ही काम किया है, पर खादी के बड़े-बड़े आन्दोलन के बावजूद पचास गाँव भी ऐसे नहीं हैं, जो सबके सब खद्दरपोश हों और जिन्होंने उसको जीवन का एक अंग माना हो, क्योंकि सारा गाँव एक है, ऐसी भावना नहीं बनायी गयी; मालकियत अलग, स्वार्थ अलग माने गये। कानून से भी वह सुरक्षित हुई। ऐसी हालत में पुराना ढाँचा कायम रहा। कोई बुनियादी चीज हाथ में नहीं दी गयी। परिणाम जाहिर था। ग्रामोदय उससे हो नहीं सकता है।

चार-पाँच साल पहले से तमिलनाड में ग्रामोदय का कार्य चल रहा है। हमने कृष्णदास (गांधी) से कहा—"तुमको इसी काम में यहाँ लग जाना चाहिए। हमने भी इसी में ताकत लगाने का निश्चय किया। लेकिन जमीन के बँटवारे के बिना वह हो नहीं सकता। दोनों मिल कर एक पूरी चीज बनती है। भूदान और ग्रामोदय की हमें सिलाई नहीं करनी है, बुनाई करनी है।*

*तिरुपुर (कोइंबतूर) में ग्रामोदय-खादी-संघ के सम्मेलन का भाषण, १७-१०-५६

स्वतंत्र समाज की सांस्कृतिक आधार-भूमि

(विल्फ्रेड वेलॉक)

मेरे जीवन-काल में ही यह देश व्यापक सामाजिक क्रान्ति की अवस्था से गुजर चुका है। इस क्रान्ति का आधार मानव-मूल्यों और मानव-दृष्टिकोणों में हुआ परिवर्तन ही है। या यों भी कह सकते हैं कि यह क्रान्ति सैद्धान्तिक एवं सांस्कृतिक रही है। इस क्रांति का आंशिक स्वरूप समाजवादी एवं पूंजीवादी सिद्धान्तों के बीच संघर्ष रहा, जिसका एक परिणाम यह हुआ कि इस शताब्दी के प्रारम्भिक बीस-पचीस वर्षों के भीतर कितने ही लोगों की धर्म-वृत्ति और धर्म-भावना समाप्त हो गयी। फल यह हुआ कि हमारी परम्परागत आदतें, रिवाज और सामाजिक मूल्य बदल गये और इनकी जगह ले ली नये विचारों ने, जिनके चलते हमारे आपसी व्यवहार एकदम बदल गये।

मजदूर-आन्दोलन के नेता विलियम मॉरिस और केर हार्डी आदि ने इस बात पर बराबर जोर दिया कि उद्योगों का संचालन मजदूरों के हाथ में रहना चाहिए तथा ऐसी परिस्थिति न उत्पन्न होने देना चाहिए कि यन्त्र चलाने वाले ही यन्त्रों के गुलाम बन जायँ। केर हार्डी का ध्यान सदा इस बात पर रहा कि मजदूर की ईमानदारी और प्रतिष्ठा पर आँच न आने पाये और इस प्रकार वह अपनी जिम्मेदारी समझे तथा सर्जनात्मक प्रवृत्ति का परिचय दे सके। विलियम मॉरिस मानव के गुणों और विशेषताओं को अधिक महत्त्व देते थे।

आगे चल कर इन नेताओं की ये उदात्त भावनाएँ समाप्त हो गयीं और बर्नार्ड शॉ और वेब आदि की शुद्ध मजदूरी सम्बन्धी नीति जोर पकड़ गयी। इन नेताओं का कहना था कि हमें अधिक से अधिक केन्द्रीकरण, अभिनवीकरण और विशिष्टीकरण पर जोर देना चाहिए, जिसमें समय आने पर आधारभूत उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जा सके। तभी यह अवस्था उत्पन्न हो सकेगी कि एक मजदूर के तीन-चार घण्टे के श्रम से ही काम चल जाय। यहाँ तक कि अपने क्षेत्र में भी, जहाँ मेरा नैतिक और प्रतिरोधात्मक प्रचार सफल रहा, मुझे उपर्युक्त नीति के अनुसार चलने को बाध्य होना पड़ा। यही कारण है कि मुझे अपनी उम्मीदवारी से हाथ खींच लेना पड़ा, क्योंकि मेरे सामने भौतिकवाद तथा नैतिकवाद या संस्कृति के बीच संघर्ष की अवस्था उत्पन्न हो गयी थी।

दुश्चक्र में डालने वाली स्वैर-वृत्ति

१९४५ के बाद के वर्षों में दृष्टिकोणों में जो व्यापक परिवर्तन हुए और उससे लोगों की आदतों और मानव-मूल्यों में जो अन्तर आया उसके फलस्वरूप समाज में जो व्यापक क्रान्ति हुई है, वह इतिहास में बेमिसाल है। कम से कम पश्चिमी देशों के लिए तो वह ऐसी है ही।

अमेरिका में इतना अधिक माल तैयार होने लगा कि उसकी खपत के लिए उधार किश्तों में ही ३५ अरब डालर की कीमत के माल की निकासी की गयी और ७० अरब डालर का माल भोग-बन्धक के रूप में लिया गया। हमारे देश की अपेक्षा वहाँ वेतन और मजदूरी प्रायः दुगुनी थी, फिर भी जो हालत पैदा हो गयी थी, उसमें वह काफी नहीं समझी जाती थी, अतः भावी आय का एक बड़ा हिस्सा भी लोग खर्च करने लगे।

आज ब्रिटेन भी उसी रास्ते पर चलने लगा है। यह विस्तारोन्मुखी अर्थनीति वह हालत पैदा करती जा रही है, जो हमें तेजी से दिवालियेपन, ध्वंसोन्मुख अर्थनीति एवं खिंचावपूर्ण वातावरण की ओर लिये जा रही है, जिसका पर्यवसान युद्ध में ही हो सकता है। हमारे देश में मोटरों का उत्पादन इतना अधिक होने लगा है कि उन्हें ७० मील की गति से दौड़ा सकने के लायक १२०० मील लम्बी नयी बड़ी-बड़ी सड़कें बनवानी पड़ी हैं। मोटरों की ही बात ले लीजिये। इनको रखने के लिए गैरेजों और दौड़ाने के लिए सड़कों के कारण बहुत-सी जमीन छिन गयी है; अतः खेती के लिए जमीन कम पड़ जाना अनिवार्य है। तो फिर हमें गल्ला बाहर से ही मँगाना होगा। इसके साथ ही मोटरें चालू रखने के लिए पेट्रोल भी अधिकाधिक आयात करते रहने की जरूरत बराबर बनी रहेगी और अर्थ-व्यवस्था ठीक रखने के लिए निर्यात भी बढ़ाना होगा।

इन सबका नतीजा क्या होगा ? उत्पादन बढ़ाने और उसमें तेजी लाने के लिए अधिक-से-अधिक खोजबीन, यन्त्रों के जरिये काम करने की अधिक प्रवृत्ति, ज्यादा-से-ज्यादा माल खरीदने की शक्ति की प्राप्ति, कच्चे माल की प्राप्ति के लिए विविध राष्ट्रों के साथ नित नयी प्रतिद्वन्द्विताएँ और उन्हें प्राप्त करने के लिए निर्यात बढ़ा कर पैसा पैदा करने की कोशिश। यह सब हमें कहाँ लिये जा रहा है ?

यदि यह प्रवृत्तियाँ अगले बीस-पचीस वर्षों तक जारी रही और इस बीच एशिया-अफ्रीका के लोग उच्च जीवन-स्तर सम्बन्धी अपनी न्याय्य माँग बढ़ाते रहे तथा कच्चे माल सम्बन्धी अमेरिका और रूस की प्रतिद्वन्द्विता जारी रही, तो निरस्त्रीकरण एवं शान्ति की गुंजायश ही कहाँ रह जाती है।

ब्रिटेन के उद्धार का एक ही मार्ग अब रह गया है। रहन-सहन सम्बन्धी अपनी विचारधारा में वह आमूल परिवर्तन करे, सांस्कृतिक एवं मानव-मूल्यों सम्बन्धी मान्यताएँ बदले और इस प्रकार संख्या की अपेक्षा गुण पर अधिक ध्यान दे, तो उसका निस्तार सम्भव है।

सर्जनात्मक उद्योग ही सर्वथा पोषक

स्थायी और दृढ़ सम्पत्ति दो ही बातों पर टिक सकती है—मानवमात्र को आधार बना कर चला जाय तथा उत्तम सामाजिक सम्बन्ध स्थापित किये जायँ। शिक्षा का प्रथम और आवश्यक उद्देश्य यह होना चाहिए कि वह हमारे मन में ऐसी भावनाओं की सृष्टि करे कि हम मानवमात्र को एक समझें। सामान्यतः शिक्षा का आदर्श ही यह होना चाहिए कि उससे हम सीखें कि मानव-मानव के अच्छे सम्बन्ध ही सुख और समाज-कल्याण के आधार बन सकते हैं। अतः संस्कृति का तत्त्व यही है कि किसी भी धन्धे, किसी भी सामाजिक कार्य के माध्यम से हम मानव समाज के हित के लिए चेष्टाशील हों।

सर्जनात्मक धंधा मनुष्य की पूरी शक्ति की अपेक्षा करता है, जिससे उसका सम्पूर्ण विकास होता है। इसके ठीक विपरीत यान्त्रिक पद्धति है, जिससे मनुष्य की शक्ति का एकांगी विकास ही सम्भव हो पाता है। यह व्यक्ति जहाँ पैसे कमाने के उद्देश्य से ही काम करता है और उसी को सारे सुखों का साधन मानने लगता है, वहाँ सर्जनात्मक कार्यों की ओर स्वयं-प्रवृत्त मनुष्य अपने कार्यों से अपना सम्पूर्ण विकास करता है, मनस्तोष लाभ करता है और इसीलिए अपने काम में रुचि लेता है।

अतः इस स्तर पर कार्य करने का अर्थ है नैतिक-आध्यात्मिक तथ्यों एवं मूल्यों को पहचानना, न कि दिन-रात अर्थ और सामग्री-उत्पादन के चक्कर में पड़े रहना एवं अपनी प्रवृत्तियों को अधोमुखि बनाना। यह अवस्था जब आयगी तब मनुष्य का जीवन सादा हो जायगा, उसकी माँग कम हो जायगी, निर्यात-आयात के बड़े भारी झमेले के चलते कच्चे माल की प्रतिद्वन्द्विता से उसे छुट्टी मिल जायगी और तब निश्चय ही आन्तरराष्ट्रीयता घट जायगी और निरस्त्रीकरण एवं शान्ति के लिए मार्ग प्रशस्त हो सकेगा। इससे सामाजिक सम्बन्ध अच्छे होंगे, परस्पर सहयोग का भाव आयगा। संस्कृति का यह स्वरूप ही सबको हृदयंगम कराना होगा। शिक्षासंस्थाओं में इसका ही प्रचार करना होगा, तभी संसार में सुख और शान्ति की स्थापना हो सकती है।

(अंग्रेजी 'सर्वोदय' से)

जीवन की उत्थान-वेला में

(विनोबा ने एक बार कहा था : 'तुलसीदास का जीवन अत्यंत शुद्ध था, इसीलिए उनके शब्दों में इतनी सामर्थ्य आयी है।' इस पर एक बहन ने पूछा : 'यूरोप के कई कवियों का जीवन पतित था, फिर भी उनके शब्दों में तो ताकत थी !')

विनोबा—"मनुष्य की आत्मा हमेशा ऊँचे जाने का प्रयास करती है और उसमें असफल होने पर वह नीचे गिरती है। यूरोप के ये कवि हमेशा ऊँचे जाने के प्रयास में ही काव्य लिखते थे, इसलिए इनके शब्दों में ताकत आती थी। इन काव्यों का उनके दैनिक जीवन के साथ संबंध नहीं था। ऐसे साहित्य में हमेशा सातत्य की कमी नजर आती है। फिर भी उनके अच्छे विचार ग्रहण करने चाहिए और उनके जीवन को भूल जाना चाहिए। मैंने शेली के काव्य को ध्यान में रखा है और उसके जीवन को मैं भूल गया हूँ !"

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

९ नवंबर सन् १९५६

सरकार का सुवरूप

(वीनोबा)

सरकार याने क्या, अीसे समझ लेना चाहीअे। हींदुस्तान के लोगों ने अपना कारोबार और सेवा-कार्य चलाने के लीअे चंद लोगों को चुन लीया है और अुनकी सरकार बनी। अीसलीअे जनता की अीच्छा के अंदर रहकर ही सरकार काम कर सकती है। सरकार जनता की सेवक है। आज जो नेता सरकार में हैं; वे जनता के नौकर हैं, सेवक हैं। जीस दीन आपने अुन्हें चुन कर सरकार में भेज दीया, अुसी दीन आपने अुनका नेतृत्व मीटा दीया और अुन्हें सेवकत्व दीया। पर जनता के वीचार का जो स्तर होगा, अुसीके अनुसार सरकार को काम करना होगा। अमेरीका की सरकार 'ड्राअी" (शराबबंदी चाहने वाली) नहीं बन सकती, क्योंकी वहां के लोग "वेट" (शराब चाहने वाले) हैं। वहां अीस 'ड्राअी" और "वेट" पर चुनाव भी लड़ा गया था, तो "वेट" सरकार बन गयी और "ड्राअी" वालों की हार हुअी। लोग अगर शराब पीना चाहते हैं, तो अुन्हें अुत्तम शराब सहूलीयत के साथ, नुकसान न हो, अैसे ढंग से सप्लाअी करना सरकार का काम है। लोगों को बहुत ज्यादा शराब मीलेगी, तो नुकसान होगा, अीसलीअे थोड़ा अंकुश रख कर शराब सप्लाअी करना सरकार का काम है। लोग अगर बीड़ी पीना चाहते हैं, तो अुत्तम से अुत्तम तमाकू पैदा करना, अुसकी अच्छी बीड़ीयां बनाना और लोगों को देना, अुस पर थोड़ा अंकुश रखना, ताकी लोगों की सेहत न बीगड़े, अीतना ही सरकार का काम है। अब समाज को बीड़ी से मुक्त कौन करायेगा? सरकार यह काम नहीं कर सकती है, क्योंकी वह आपकी सेवक है। नौकर मालीक का सुधार नहीं कर सकता, वह अुसकी सेवा कर सकता है। यह बात अलग है की आज की सरकार में कुछ नेता भी हैं, यानी बावजूद अीसके की आपने अुन्हें नौकर बनाया है, वे अपने गुण से नेता बन रहे हैं। लेकीन आपने अुन्हें जीस हैसीयत में रखा है, वह हैसीयत नौकर की है, मालीक की नहीं।

आज जो मूल्य बने हुअे हैं, अुन मूल्यों के आधार पर ही सरकार काम कर सकती है। आज की आपकी सरकार यानी आपकी लोकसभा, जीसने तय कीया है की राष्ट्रपती, प्रधान मंत्री, अन्य मंत्रीयों आदी को फलां तनख्वाह देनी ही चाहीअे। यह अीसलीअे तय कीया की आज जनता में भी दरजे बने हुअे हैं, जैसे जीस काम की जीतनी योग्यता ज्यादा, अुतनी अुसे ज्यादा तनख्वाह मीलनी चाहीअे।

तो, यह सब हमें बदलना है। यह बदले बीना देश का स्तर नहीं अुठेगा। यह सब कौन करेगा? यह काम जनता को करना होगा, और वह जनशक्ती से होगा। अीसमें सत्ता का कोअी अुपयोग नहीं है। सत्ता कुछ थोड़ी मदद पहुंचा सकती है, तो पहुंचायेगी!

(तीरुपुर, कोअींबतूर, १६-१०-५६)

सर्वोदय की दृष्टि

अब भी अनर्थ टल सकता है

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने अपने एक नाटक में अंग्रेज जाति की तबीयत की तस्वीर इस तरह खींची है: "इतनी अच्छी या इतनी बुरी दुनिया में कोई चीज़ नहीं है, जिसे अंग्रेजों को करते हुए आप नहीं पायेंगे। फिर भी आप किसी अंग्रेज़ को कभी गलती करते नहीं पायेंगे। वह हर चीज़ उसूल के नाम पर करता है। देशभक्ति के सिद्धान्त के नाम पर वह आपसे जूझ पड़ता है। व्यापारी-नीति के नाम पर वह आपको लूटता है। साम्राज्यवाद के सिद्धान्त के नाम पर वह आपको गुलाम बनाता है। मर्दानगी के नाम पर वह आपके साथ छोड़-छाड़ करता है। राजनिष्ठा के नाम पर वह अपने राजा का समर्थन करता है और लोकराज्य के नाम पर अपने राजा का सिर उड़ा देता है। हमेशा उसका बीजमंत्र है—कर्तव्य। और वह यह कभी नहीं भूलता कि जो राष्ट्र अपने कर्तव्य को अपने स्वार्थ से टक्कर होने देता है, वह राष्ट्र कहीं का नहीं रहता।"

साम्राज्यवादी और व्यापारवादी इंग्लैंड की प्रकृति का यह व्यंग्य-चित्र है। बर्नार्ड शॉ की नजर बहुत पैनी थी। इसलिए उसके व्यंग्य-चित्रों में भी सचाई का अंश भरपूर रहता था। सारी दुनिया को लोकतंत्रवाद का सबक सिखाने का इंग्लैंड दम भरता रहा है। लेकिन मिस्र देश पर इस वक्त फ्रान्स के साथ मिल कर इंग्लैंड ने जो चढ़ाई की है, वह उसकी छिपी हुई मुर्दार साम्राज्य-लालसा को रोशनी में लाती है। उस कहानी के भेड़िये ने मेमने को खाने के लिए जितने बहाने पेश किये थे, उतने भी इंग्लैंड और फ्रान्स के पास नहीं हैं। भेड़िया पेट्ट भले ही होता हो, फिर भी उसकी सारी शरारतों की एक हद होती है। लेकिन आज की परिस्थिति में इंग्लैंड और फ्रान्स ने जिस निर्लज्जता के साथ आन्तरराष्ट्रीय सद्व्यवहार के सारे नियमों का उल्लंघन किया है, उसमें न तो विवेक है और न वीरता ही है। पिछले दोनों महायुद्धों के वक्त इंग्लैंड ने बड़े अभिमान के साथ घोषित किया था कि हम छोटे-छोटे राष्ट्रों की आजादी खतरे में नहीं पड़ने देंगे। छोटे राष्ट्रों की आजादी के लिए हथियार उठाना स्वातंत्र्य-प्रेमी इंग्लिश राष्ट्र का परम धर्म है। लेकिन आज वे सारी घोषणाएँ हवा हो गयी हैं।

इंग्लैंड की इस नीति का धिक्कार उसके मित्र राष्ट्रों ने भी बिलकुल साफ शब्दों में किया है। विरोधी पक्ष ने इस हमले के खिलाफ अपनी आवाज़ ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में उठायी। राष्ट्रसंघ ने तो सशस्त्र कार्रवाई करने का इरादा भी जाहिर किया है।

क्षुद्र स्वार्थ के लिए इंग्लैंड और फ्रान्स अपने दोस्तों की दोस्ती और सारी दुनिया की सद्भावना खो रहे हैं। स्वार्थ के नशे के कारण आज उन्हें अपनी हानि का भी ध्यान नहीं रह गया है। जिस राष्ट्रसंघ के निर्माण और संचालन में उनका मुख्य हिस्सा रहा, उसकी इज्जत और हस्ती ये दोनों राष्ट्र स्वार्थ से अंधे हो कर मिटा रहे हैं। हाल ही में राष्ट्रसंघ-दिन मनाया गया और दुनिया भर के सारे राष्ट्रों से राष्ट्रसंघ जैसी आन्तर्राष्ट्रीय संस्था का संवर्धन करने के लिए अपील की गयी। उस अपील की गूंज अभी आसमान में फैल ही रही थी कि इतने में इंग्लैंड और फ्रान्स जैसे राष्ट्रसंघ के दो प्रमुख सदस्यों ने उसके सिर पर सीधा प्रहार किया। गलती करना अगर इन्सान का स्वभाव है, तो उसे सुधारना इन्सान की शान है। क्या हम यह आशा करें कि इंग्लैंड और फ्रान्स आज भी विवेक सीखेंगे और और राष्ट्रसंघ के आदेश को मान कर जागतिक शान्ति को खतरे से बचायेंगे?

साम्यवादी आक्रमण

इधर इंग्लैंड और फ्रान्स के सामने कम्यूनिज्म का हौआ है, तो उधर साम्यवादी रूस के सामने नित्य-निरन्तर प्रतिक्रांतिवाद का जिन खड़ा है। दोनों पक्ष अपनी परछाईं से भी घबराने लगे हैं। सारी दुनिया को पूंजीवाद के शिकंजे से बचाने का जिम्मा रूस ने लिया है। वह अपने को दलित-पीड़ितों को उबारने वाला मानता है। हंगेरी में उसने जो सशस्त्र हस्तक्षेप किया है, वह प्रतिक्रांतिवादियों की साजिशों के जवाब में किया है। अगर अंग्रेज कभी गलती नहीं करता, तो रूस कभी ज्यादती और जुल्म नहीं करता। दोनों जो कुछ करते हैं, उसमें अहम उसूल होता है, अक़ीदा होता है और दुनिया की भलाई होती है। इंग्लैंड-फ्रांस राष्ट्रसंघ से इसरार कर रहे हैं कि वह तुरन्त हंगेरी में आन्तर्राष्ट्रीय फौजें तैनात करे और रूस की शरारत को रोके; लेकिन अपनी खुराफ़ातों से बाज नहीं आते!

www.vinoba.in

इंग्लैंड, फ्रांस और रूस अगर सचमुच लड़ाई नहीं चाहते, तो अपनी निष्ठा साबित करने का उनके लिए आज मौका है। 'हमारी मर्ज़ी के खिलाफ़ कोई बात नहीं होगी, तो हम कभी हाथ नहीं उठायेंगे,' यह नीति अमनपरस्तों की नीति नहीं है। "कोई हमको सतायेगा तो भी हम हथियार उठाने के बदले आन्तर्राष्ट्रीय अदालत में मामला पेश करेंगे," यही आन्तर्राष्ट्रीय सद्व्यवहार का अर्थ है। स्टालिन का कम्यूनिज्म भी जब से कुफ्र करार दिया गया, तब से कौनसा कम्यूनिज्म सद्धर्म और कौनसा पाखंड है, यह कहना मुश्किल हो गया है। अब तो हिन्दुस्तान की कम्यूनिस्ट पार्टी भी कहती है कि मास्को हमारा एकमात्र शंकराचार्य नहीं है। अब तो दूसरे आचार्यपीठ भी कायम हो गये हैं। ऐसी हालत में तलवार से मसला हल करने की कोशिश तो खालिस प्रतिगामिता मानी जानी चाहिए।

भारत जब से आज़ाद हुआ, तब से वह दोनों पक्षों का निरपेक्ष मित्र रहा है। उसकी नीयत साफ़ है। अगर इंग्लैंड, फ्रांस और रूस उसकी सलाह मान लें, तो आज भी अनर्थ टल सकता है।

काशी, ५-११-'५६ —दादा धर्माधिकारी

गयावाले आज भी सारे देश को प्रेरणा दे सकते हैं!

(दामोदरदास मूँदड़ा)

कभी-कभी कुछ जिम्मेदार लोग भी, बिना किसी प्रकार की जानकारी प्राप्त किये, कह बैठते हैं—"विनोबाजी ने गया की तीन बार पदयात्रा की, अपने जान की बाजी लगा दी, लेकिन गया में भू-क्रान्ति के कोई आसार नजर नहीं आते। जो ज़मीन मिली है, उसमें बहुत-सी तो बोगस है, और जो है, उसमें से दस हजार एकड़ से अधिक वितरण-योग्य नहीं हैं। यह सब तो है ही, लेकिन भूदान के द्वारा शाश्वत मूल्यों की प्रस्थापना की जो बात की जाती है, हृदय-परिवर्तन की जो बात कही जाती है, उसका तो कहीं कोई दर्शन ही नहीं होता।"

मैं इन मित्रों के साथ दलील नहीं करना चाहता। लेकिन उन्हें आमंत्रित करता हूँ कि वे गया के गाँवों में तथा दफ्तर में आकर देखें। गया-दफ्तर में आज एक लाख तीस हजार एकड़ भूमि के दानपत्र मौजूद हैं। इसके सिवा करीब छः-सात हजार का दान ऐसा है, जो समय-समय पर जयप्रकाश बाबू आदि नेताओं की सभा में घोषित हुआ है, परन्तु जिसके दान-पत्र मौजूद नहीं हैं। वितरण के समय लोग स्वयं उस दान का जिक्र करते हैं और वह जमीन भी बँटती जा रही है। करीब बीस हजार एकड़ जमीन तो गया जिले में बँट चुकी है। एक बार ट्रैक्टर से जुतवा कर दी जाने योग्य जमीन हिसाब में पकड़ लें, तो कम-से-कम एक लाख एकड़ जमीन का बँटवारा गया जिले में होगा, ऐसा गया ज़िला-भूदान-समिति के जिम्मेदार सदस्यों का कहना है।

शाश्वत मूल्यों की प्रस्थापना और हृदय-परिवर्तन की बात को दिखाना बहुत कठिन है। लेकिन गया में हम देखते हैं कि जो लोग—भूमिवान और कार्यकर्ता—दफ़ा चालीस के मातहत लगान को नगदी कराने के आंदोलन के समय एक-दूसरे को दुश्मन समझते थे, एक-दूसरे के प्रति अविश्वास रखते थे, वे आज भूदान के प्रांगण में भाई-भाई की तरह कंधे से कंधा मिला कर काम किये जा रहे हैं। इसके अलावा स्वामी रामानन्द भारती तथा श्री खजवती महंत जैसे मठाधिपति भी गरीबों की सेवा में जुट गये हैं—कूप-निर्माण में, चरखा कतवाने में; गर्ज अनेकविध निर्माण-कार्य में स्वयं सतत शारीरिक परिश्रम द्वारा हिस्सा ले रहे हैं। हृदय-परिवर्तन और कैसे होता है?

सेखवारा के भूमि-पुत्रों ने भूदान की जमीन पाने पर कटनी के समय मालिक की फसल में अब तक की जाने वाली चोरी करने से इनकार कर दिया और जीवन-वेतन की माँग की। उन्हें बाइस दिन तक कष्ट सहना पड़ा, वे काम पर नहीं गये। इर्दगिर्द के दसों गाँवों से एक भी मजदूर मालिक की मदद करने नहीं आया। आखिर मालिक को उन भुइया भाइयों की बात माननी पड़ी। और यह सब हुआ सद्भावना कायम रखते हुए। बेदखली का समय आया, तो गाँव के सभी छोटे-छोटे किसान हरिजन भूमि-पुत्रों की अधिकार-रक्षा के लिए कटिबद्ध हो गये। बेदखली नहीं हो सकी।

जहाँ हमने तीस परिवारों में केवल चौदह बैल साधन-दान के रूप में दिये थे, वहाँ आज भूमि-पुत्रों ने अपने पुरुषार्थ से पचीस जोड़ी बैल बना लिये हैं। जहाँ व्यापारी अनेक-विध वस्तुएँ लाकर गाँव का शोषण करता था, वहाँ गाँव की अपनी दूकान कायम कर के गाँववालों ने यह शोषण-प्रक्रिया रोक दी है। हरिजन बहनें और माताएँ दो वर्ष के भीतर-भीतर मधुर कंठ से 'रामचरितमानस' गाने लगी हैं, बच्चों के बदन पर खादी के वस्त्र चमकने लगे हैं। जब बाहर के लोग मुझसे अनेक प्रकार प्रश्न पूछते हैं तो मेरी वाणी में भूदान के इन चमत्कारों के बल का संचार हो जाता है। देहली से नियोजन-समिति के सदस्यों ने भी सेखवारा, कोशला, जानीबिघा, मनफर आदि गाँवों का निरीक्षण किया है और विस्मय प्रगट किया है। यह सारा मूल्य-परिवर्तन नहीं है तो क्या है?

अभी तक हम गया जिले के समग्र गाँवों में नहीं जा पाये हैं। आधे से कुछ ही अधिक गाँवों में यह काम हो पाया है। सन् सत्तावन की क्रांति में गया महत्त्वपूर्ण हिस्सा प्रदान कर सकता है। विनोबाजी की कल्पना है कि एक दिन में देश भर में सर्वत्र भूमि का बँटवारा हो जाना सम्भव है। आगामी दो अक्टूबर का दिन वे मुकर्रर करें—नहीं कह सकते कि वे कौन दिन तय करेंगे। परन्तु गयावाले चाहें तो उसके बहुत पहले यह चमत्कार यहाँ प्रकट कर सकते हैं। बड़े से बड़े भूमिवानों का सक्रिय सहयोग हमें हासिल है और हो सकता है। भूदान के चोटी के नेता इस जिले में रहते हैं। सर्व-सेवा-संघ, प्रांतिक-भूदान-कार्यालय, समन्वय-आश्रम, बोधगया तथा सर्वोदय-आश्रम सेखोदेवरा जैसी महान् संस्थाएँ यहाँ हैं। पड़ोस में ही खादीग्राम है। विनोबाजी की घोषणा की बाट देखे बिना गयावाले उपर्युक्त विविध संस्थाओं की सहायता से आगामी २६ जनवरी या १८ अप्रैल या १५ अगस्त तक अपने जिले के समस्त भूमिवान भाइयों को प्रेरणा दे सकते हैं कि वे अपने-अपने गाँव के भूमिहीनों को बुला कर आवश्यक ज़मीन स्वेच्छा से बाँट दें। गया के भूमिवानों के हृदय में ऐसी सद्भावना का दर्शन हमें हुआ है, आज भी हो रहा है। अगर यह कार्य गया में हुआ, जो कि जरूर हो सकता है, तो ऐसा चमत्कार होगा, जिससे सारे देश को प्रेरणा मिलेगी।

गंगोत्री से गंगा निकलती है और बढ़ते-बढ़ते महासागर में विलीन हो जाती है, लेकिन उसका प्रवाह बंद नहीं होता। सूरज अस्ताचल में विश्राम लेता है, फिर भी सारे गगन में उसका प्रकाश छाया रहता है। विनोबाजी के बिहार छोड़ने के बाद और भूदान-गंगा का उत्कल में ग्रामदान के रूप में भूक्रांति के महासागर में विलीन होने के बाद भी बिहार में गंगा का प्रवाह पूर्ववत् उसी वेग से जारी है। बिहार के क्षितिज में भूदान-भानु की प्रतापी किरणों की प्रतिभा अब भी ज्यों कि त्यों है। मैं आपको इसके लिए संत विनोबाजी की ओर से और देश के करोड़ों भू-पुत्रों की ओर से बधाई देता हूँ।

गया में अनेक चमत्कार हुए। नारी-शक्ति का जो रूप यहाँ भूदान के निमित्त प्रगट हुआ, वह कहीं नहीं हुआ। जिसे आज गणसेवकत्व कहा जाता है और जिसका सफल प्रयोग हमारे मध्यप्रदेश के मित्रों ने कर दिखाया है, उसका श्रीगणेश आपके यहाँ बारसेलीगंज में सन् '५३ में ही हो चुका था—जब तीन दिन में आपने उस थाने के सभी गाँवों में भूदान का सन्देश पहुँचाया। भूमिदान प्राप्त किया। साहित्य की बिक्री की और अनेक नये-नये कार्यकर्ता प्राप्त किये। वह बीज फिर ढका रहा और मध्यप्रदेश की भूमि में अंकुरित हुआ। अब देश भर में उसकी बेल फैल रही है। आगामी सर्वोदय-सम्मेलन तक हमें देश के पाँच लाख गाँवों में संदेशा पहुँचा देना है। सामूहिक पद-यात्राओं में वैसी शक्ति मौजूद है। लेकिन गया को एक नया उदाहरण देश के सामने पेश करना है। भगवान् बुद्ध की इस तपोभूमि में, बोधिवृक्ष की छाया में, जहाँ भगवान् ने चालीस दिवस का व्रत रखा, जिस भूमि को विनोबा की प्रयोग-भूमि का सम्मान प्राप्त हुआ, उस भूमि में एक और चमत्कार होना आवश्यक है—होने वाला है। बात बहुत बड़ी नहीं है। पचीस से अधिक थाने यहाँ नहीं हैं। फ़ी थाना एक व्यक्ति ऐसा तैयार हो जाय कि या तो विनोबाजी की कल्पना के अनुसार भू-क्रांति हो या उसको लाने में और प्रचार में यह काया ही समर्पण हो जाय। अखंड पदयात्रा द्वारा चरैवेति के मंत्र से प्रेरणा पाकर भूदान का संदेश गाँव-गाँव, डगर-डगर सतत सुनाते रहने वाला प्रति थाना एक भी क्रांतिकारी प्रतिभावान कार्यकर्ता यदि अग्रसर होता है तो गया जिले में भू-क्रांति बहुत जल्द सिद्ध हो जायगी। अब तक के सत्याग्रह को हमें अब सौम्यतर और सौम्यतम बनाना है। विनोबाजी ने अपनी पदयात्रा दिन में दो बार की कर दी है। वे कहते हैं -"मैं चाहता हूँ कि मेरा शरीर भूदान के काम में टूट पड़े। पहले प्राण निकले, फिर शरीर गिरे।" गया जिले ने बाबा के पद-चिह्नों पर चलने का अच्छा प्रयत्न किया है। पर बाबा कहते हैं कि जीवन में कभी तो सर्वस्व-त्याग की बेला आनी चाहिए। ऐसी बेला आज आ चुकी है। सद्विचार पर अमल करने का आज से अधिक अच्छा अवसर इस देश में पहले कभी नहीं आया।*

* श्री दामोदरदास मूंदड़ा द्वारा गया की एक सप्ताह की यात्रा में भिन्न-भिन्न स्थानों पर दिये गये व्याख्यानों से संकलित।

www.vinoba.in

इतिहास की पार्श्वभूमि में 'स्वदेशी' का अर्थ

(पूर्वार्ध)

(विनोबा)

श्री वैकुंठभाई (मेहता) ने अभी कहा कि पचास-साठ साल से स्वदेशी के दो आंदोलन हुए, लेकिन स्वदेशी विचार हमारे मानस में स्थिर नहीं हुआ। बात ठीक है, परंतु इसके कारणों का चिंतन हमें करना चाहिए, ताकि उसका निराकरण किया जा सके।

पहला स्वदेशी विचार स्वदेश-प्रेम की दृष्टि से नहीं, विदेशी राज्य हटाने के साधन के रूप में निर्माण हुआ। उसका स्वरूप पॉजिटिव नहीं, निगेटिव था। स्वदेश-प्रेम का अंश उसमें था; क्योंकि गुलामी हटाने का अन्य कोई साधन मिल नहीं रहा था, इसलिए आर्थिक बहिष्कार के एक शस्त्र के रूप में उसका उपयोग हुआ। अंग्रेजों का माल न खरीदा जाय, भले दूसरे देशों का हम खरीदें, ऐसा उसका स्वरूप था। जापान का माल हम एशियाई होने के नाते लेते भी थे। फिर परदेशी वस्त्र के ही बहिष्कार की बात आयी तो भी यहाँ की मिलों को प्रोत्साहन मिला और उन्होंने नफा अच्छी तरह कमा कर देश को खूब ठगा, परंतु उन्होंने ही आंदोलनों को भी मदद पहुँचायी। यह मैं घृणा के रूप में नहीं, इतिहास के रूप में कह रहा हूँ। यानी वे आंदोलन मध्यम-वर्ग या ऊपर के वर्ग के थे। जनता की ताकत बढ़े, ऐसी कोई चीज उससे नहीं बनी।

विचार-दोष

फिर गांधीजी के समय का स्वदेशी-आंदोलन आया। उन्होंने पहले का दोष पहचान लिया था, इसलिए ग्रामोद्योग पर जोर देकर उसे "सौ प्रतिशत स्वदेशी" उन्होंने बताया। जब ग्रामोद्योगों को सौ प्रतिशत स्वदेशी कहा, तो उसका मतलब यह होता ही है कि ग्रामोद्योगों के बदले हम यहाँ की मिलों की चीजें अगर खरीदें, तो वे भी कुछ परसेंट 'स्वदेशी' हो जाती हैं। उसे भी कुछ तो नंबर मिल ही जाते हैं। इसलिए उसका पूरा निषेध नहीं होता है। फिर भी उसका काफी निषेध हुआ और नये आंदोलन में पुरानी स्वदेशी का दोष दूर हुआ। पर एक नया दोष और आ गया, जो गुण भी था। गुण के साथ दोष का मिश्रण कई बार हो जाया करता है; तो उसका गुण यह था कि देश की आजादी के साथ वह चीज जुड़ी हुई थी, केवल ग्रामोत्थान की दृष्टि उसमें नहीं थी। इस आकर्षण और गुण के कारण आजादी के आंदोलन के साथ वह व्यापक हुआ। लेकिन दोष यह आया कि लोगों ने आर्थिक बुनियादी अंश के रूप में उसे नहीं स्वीकार किया, जिस पर कि गांधीजी बहुत जोर देते थे। काँग्रेस के नेता पूछते थे, "आजादी का सूत से क्या संबंध है?" "तलवार से स्वराज्य नहीं मिलता है," यह बात निगलना भी हमारे लिए बड़ा मुश्किल था, लेकिन तलवार हाथ में थी ही नहीं, इसलिए चीज मान ली गयी। पर सूत के धागे से स्वराज्य मिलने की बात ग्रहण नहीं हुई। 'जन-संपर्क' के खयाल से लोगों ने वह कबूल की। उसके द्वारा अंग्रेजी-राज के प्रति असंतोष भी पैदा होता था, क्योंकि देश की दरिद्रता इस बात के जरिये प्रकट की जा सकती थी। यह सब सही भी था, परंतु 'चरखे से हम अंग्रेजों के खिलाफ भावना पैदा करेंगे', यह विचार-दोष भी साथ-साथ पैदा हुआ, जिसके परिणामस्वरूप स्वराज्य आते ही चरखे का काम अब समाप्त है, ऐसा लोगों ने मान लिया। यह मनोवृत्ति ध्यान में रखने लायक है। एक मिसाल देता हूँ।

स्वदेशी-सिद्धांत की उपेक्षा

गांधी-इर्विन-समझौते में शराब की दूकानों पर पिकेटिंग करने का हक़ कायम रख कर बापू ने आंदोलन वापस लिया, क्योंकि नैतिक कर्तव्य के रूप में बापू ने वह माँग रखी थी। लेकिन स्वराज्य के बाद उसकी क्या हालत हुई? दूसरी मिसाल अस्पृश्यता-निवारण की है। वह कानून से तो मिट गयी, याने काग़ज़ों में मिट गयी, लेकिन कार्यकर्ताओं ने उसे छोड़ दिया। इस तरह स्वराज्य-प्राप्ति के समय बतायी हुई बापू की चीजें एक-एक करके ढीली पड़ गयीं। कहा गया कि "पेड़ पर फूल था, फिर फल आया; और तब फूल गिर गया, तो क्या बुरा हुआ? स्वराज्यरूपी फल मिला और स्वदेशीरूपी फूल गिर गया, इसमें क्या नुकसान हुआ?" इसलिए खादी-बोर्ड शुरू होने में पाँच-छह साल लग गये और यह देर भी किसी को अखरी नहीं है। जो लोग स्वराज्य के जमाने में खादी पहनते थे, उनमें से बहुतों ने वह छोड़ भी दी। लाभ-प्राप्ति के लिए खादी पहनने वाले बढ़ गये, यह अलग बात है। सारांश स्वदेशी का सिद्धांत हमने इस तरह कभी ग्रहण ही नहीं किया।

अहिंसक समाज-रचना की बुनियाद

बापू ने सिखाया कि सत्य और अहिंसा के समान स्वदेशी भी एक धर्म है, क्योंकि आस-पास के लोगों की बनायी हुई चीजें छोड़ कर दूर की चीजें लेने में करुणा की नहीं, लाभ की दृष्टि होती है। करुणा की दृष्टि के कारण आसपास के लोगों का दुःख हम दूर कर सकते हैं। इसमें दूर वालों का द्वेष नहीं। वे भी अपना माल इस्तेमाल करें। स्वराज के बाद यह चीज छोड़ दी गयी, क्योंकि स्वदेशी-विचार को एक संकुचित भावना का रूप मान लिया गया था।

अगर हम अहिंसक समाज-रचना करना चाहते हैं, तो बुनियादी बातें हमें समझ लेनी चाहिए; अन्यथा हिंसा को ही बढ़ावा मिलेगा। वैकुंठ भाई ने इस दृष्टि से दो बातें बतायीं—(१) उस-उस स्थान के लोग अपना भार दूसरे पर न रखें, खुद ही उठायें अर्थात् स्थावलम्बन करें और (२) आर्थिक समानता की आवश्यकता। पर इस संबंध में हमें विचारों की स्पष्टता कर लेनी चाहिए।

स्वावलंबन मात्र नहीं, समर्थों का परस्परावलंबन

अंग्रेज़ी में जिसे 'सेल्फसफिशिएन्सी' (स्वावलंबन) कहते हैं वह एक गाली भी आज मानी जाती है। कुछ लोग इसे नफरत से देख कर उसे दुर्गुण मानते हैं। वे कहते हैं, "हम अपना-अपना देखें, दूसरों की परवाह ही न करें, जैसे कि पुराने ब्राह्मण अपना चूल्हा अलग जलाने की बात करते थे वैसे करें—क्या आपका यही स्वावलंबन है?" अतः शब्दों का इस्तेमाल हम समझ-बूझ कर करें। जिस शब्द को हम अच्छा समझते हैं, उस शब्द को सामने वाला क्या समझता है, इस पर सोचना चाहिए। फिर वे कहते हैं "त्रावणकोर में रबड़ अच्छा होता है, तो फिर वहाँ के लोग चावल की फसल का आग्रह क्यों करें? और प्रान्त के लोग वहाँ अनाज भेज दें और त्रावणकोर उनको रबड़ भेजे।" पर हम तो कहते हैं कि हम सर्वोदय वाले स्वावलंबन के सिद्धान्त को नहीं मानते हैं, बल्कि परस्परावलंबन के सिद्धान्त को मानते हैं। वह भी दो प्रकार का होता है। एक समर्थों का, दूसरा असमर्थों का। दो समर्थ मिल कर परस्पर का सहयोग करेंगे तो वह समर्थों का परस्परावलंबन माना जायगा। वही हम चाहते हैं। आज कल पंगुओं का परस्परावलंबन चल रहा है, जैसे अंधे और लंगड़े का होता है। देहातवाले अंधे हैं और शहरवाले लंगड़े। शहरवाले हाथ से काम नहीं करते, अकल से काम करते हैं; और देहातवाले अकल से नहीं, हाथ से करते हैं। और उनके कंधे पर शहरवाले बैठते हैं। यह तो असमर्थों का सहयोग, असमर्थों का परस्परावलंबन हुआ। दिल्ली में बैठ कर कुछ लोगों के नाम तय किये जाते हैं और देहात के लोगों से कहा जाता है—"तुम अंधे हो और ये अकलवाले हैं, इन्हें चुन दो। फिर ये योजना बनायेंगे और तुम सहयोग दो।" तो, ऐसा परस्परावलंबन हमें नहीं चाहिए। हमारी योजना में दो पूर्ण मिल कर ही परिपूर्ण बनते हैं। "पूर्णम् अदः, पुर्णम् इदम्।" परमेश्वर ने भी अकल का बँटवारा ही किया है, उसे एक जगह केंद्रित नहीं रखा।

स्वदेशी का अर्थ

जहाँ अच्छा गेहूँ पैदा नहीं होता है, वहाँ हम भी गेहूँ पैदा नहीं करेंगे। लेकिन रोज गेहूँ खाने का आग्रह भी फिर हम नहीं रखेंगे; वहाँ चावल और ज्वार पैदा होता हो तो वही खायेंगे। कभी गेहूँ खाने की इच्छा हो जाय, तो वह पाप नहीं मानेंगे, बाहर से खरीद लेंगे। लेकिन जिन चीजों की रोजमर्रा की आवश्यकता है, जिनके बिना एक क्षण भर भी नहीं चलता है, ऐसी चीजों का भार दूसरों पर न डालने का नाम ही स्वदेशी है। यही अहिंसा की रचना है। स्वदेशी में बाहर के लोगों के साथ व्यापार-व्यवहार जरूर चलेगा। लेकिन मेरा पाँव अच्छी तरह काम करता है तो मैं अपने पाँव से चलूँगा और हाथ कमजोर है, तो बोझ उठाने में दूसरों की मदद लूँगा, उसके लिए मैं संकोच नहीं करूँगा; क्योंकि उसको मैं अपने से अलग नहीं मानता हूँ। मदद करना उसका धर्म भी है, परन्तु पाँव मजबूत होते हुए दूसरों के कंधों पर मैं क्यों खड़ा होऊँ? जो चीजें देहात में अच्छी तरह बना सकते हैं वे न बना कर दूसरों की खरीदना, इसका क्या अर्थ है? अहमदाबाद, बम्बई, कोइंबतूर जैसे शहरों में अगर कपास पैदा होती, तो हम देहातवालों से कहते—"खादी का आग्रह मत रखो", लेकिन कपास तो देहात में पैदा होती है। तो, इधर की कपास उधर क्यों भेजो और उधर का कपड़ा इधर क्यों लाओ? यह भी कोई तुक है?

———

www.vinoba.in

नयी तालीम का स्वरूप

(नेमिशरण मित्तल)

हमारे प्राचीन शिक्षाशास्त्रियों ने एक स्वर से ज़ाहिर किया है कि 'सा विद्या या विमुक्तये' —विद्या वही है, जो मनुष्य को उसके जीवन के सम्पूर्ण अभावों, कुभावों और संकीर्ण मनोविचारों से मुक्त कर दे। मनुष्य का जीवन आखिर स्वतंत्र रूप से क्या हस्ती रखता है, उसका जो कोई भी गौरव है, जो कुछ भी उसकी महत्ता है, वह सब समाज के एक सदस्य के रूप में है। समाज का मूल आधार है, सामाजिकता और सामाजिकता का अर्थ है, व्यक्ति के संकीर्ण हितों और भोग-लिप्सा से ऊपर उठ कर व्यापक सामाजिक हितों का चिन्तन और उनकी प्राप्ति के लिए प्रयास। हमें यह तय करना होगा कि मनुष्य की बुनियादी प्रकृति क्या है और हम शिक्षा-संस्कार द्वारा उसे क्या बनाना चाहते हैं। शिक्षा के सामने दो में से एक लक्ष्य हो सकता है, या तो यह कि मनुष्य की प्रकृति जैसी है, वैसी ही रहे और उसके स्वाभाविक संस्कारों को शिक्षा जैसे का तैसा रूढ़ कर दे, अथवा शिक्षा अपने सामने यह ध्येय रखे कि मनुष्य की प्रकृति में जो मनुष्यत्व है, सामाजिकता और श्रेष्ठता है, उसे शिक्षा द्वारा पोषण प्राप्त हो तथा उसके पशु-स्वभाव का वह सम्यक् रीति से परिहार करे।

विद्या समाज के लिए

विद्या एक संस्कार है। संस्कार का अर्थ है, मानव-प्रकृति के विकार का निराकरण। विद्या की आवश्यकता ही यह है कि वह हमारे मानसिक और बौद्धिक विकारों से हमें मुक्त करे तथा हमारे भीतर ऐसे सम्यक् ज्ञान और चेतना एवं विवेक को दृढ़ करे, जिसके द्वारा हम अपने सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति कर सकें। मनुष्य का व्यक्तिगत हित कोई स्वतंत्र मान्यता या कल्पना नहीं है। व्यक्ति का हित समाज के संदर्भ में ही कूता जा सकता है। हमें अपने उन तमाम हितों को त्याग देना है, जो हमारे सामाजिक जीवन का अहित करके हमें प्राप्त करने पड़ें। मनुष्य-जीवन का चरम् हित यह है कि वह योग-युक्त हो। योग किससे ? व्यक्ति जब अपने व्यक्तित्व के घरौंदे को तोड़ कर समष्टि के साथ एकाकार होता है, तो वही योगावस्था है। संयोग के मार्ग में जो कुछ भी बाधक है, वह हित नहीं, अहित है। हमें अपने ऐसे समस्त अहितों से सावधान रहना चाहिए, जो हमें समाजविमुख करके देह-निष्ठा की ओर ले जायँ। हमें तो आत्म-निष्ठ बनना है। आत्मा की प्रतीति होते ही सारे जगत् से तन्मयता और तद्रूपता का निर्माण होता है। विद्या का यही लक्ष्य है कि वह देहनिष्ठा से ऊपर उठा कर मनुष्य को आत्मनिष्ठा की ओर अर्थात् उसके सामाजिक हित-संरक्षण की ओर ले चले। व्यक्ति मरण-धर्मा है और समाज अमर-धर्मा। हम जब समाज में जीना सीखेंगे, तभी हमें सच्चे अमरत्व की प्राप्ति होगी।

भावी समाज का चित्र

प्रश्न यह है कि हमारे दिमाग में भावी समाज की क्या तस्वीर है ? हम एक ऐसा समाज बनाना चाहते हैं, जिसमें मनुष्य की मनुष्य से होड़ हो, अर्थात् मनुष्य मनुष्य के विरुद्ध खड़ा हो; उनमें द्वेष, कलह और विग्रह पैदा हो अथवा हमारे समाज का चित्र ऐसा है, जिसमें मनुष्य का मनुष्य से सहयोग हो उनमें हित-वैषम्य न होकर साद्धर्म्य की सृष्टि हो, तथा प्यार, प्रेम और त्याग का वातावरण बने। आज के तथाकथित सभ्य-संसार में जिस असभ्य समाज का निर्माण हुआ है, यदि हमें उसका अनुसरण करना है, तो फिर हमें अपने तमाम सांस्कृतिक, धार्मिक और मानवीय मूल्यों का परित्याग करके एक हिंसक और विग्रहमयी व्यवस्था को स्वीकार करना होगा। वैसी स्थिति में आज जो शिक्षा-पद्धति देश में चालू है, वह सर्वथा उसके उपयुक्त है और उसमें कोई फेर-बदल करने की आवश्यकता नहीं है। शिक्षा-पद्धति में परिवर्तन करने का प्रश्न तभी उठता है, जब हम वर्तमान काल में प्रचलित पश्चिमी जगत् की असभ्य-विकृति (सभ्य संस्कृति नहीं) का मार्ग छोड़ कर सभ्य-संस्कृति के दिव्य पंथ पर अग्रसर होने के लिए कटिबद्ध हों। नयी तालीम ऐसे समाज का चित्र सामने रख कर चलती है, जिसमें नैतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सत्ता का केन्द्रीकरण न हो, जो शासनमुक्त हो—व्यवस्था मुक्त नहीं—जिसमें आर्थिक शोषण की कोई गुंजाइश न हो, मनुष्यों में परस्पर प्रेम का नाता हो, होड़ न हो, और उत्पादन के साधनों पर व्यक्तिगत स्वामित्व न हो, वरन् उनकी व्यवस्था समाज के हाथों में रहे और वे सदा उन्हें मुक्त रूप से उपलब्ध रहे, जो श्रम करना चाहते हैं; स्वामित्व ईश्वर का माना जाय। ऐसे समाज की मूल-इकाई (बेसिक यूनिट) गाँव को माना गया है तथा सर्वसम्मति से व्यवस्था करके प्रत्येक मनुष्य का सम्यक्-हित-सम्पादन करने की दृष्टि प्रमुखतः रखी गयी है।

भूदान-वृत्ति कैसे बढ़े ?

(जेठालाल गोविंदजी)

हम अगर जनता में भूदान-वृत्ति बढ़ाना चाहते हैं तो उसका अर्थ हमें समझ लेना होगा। वह अर्थ है—घट-घट में परमेश्वर की भावना ऐसी दृढ़ हो कि वह हमारा स्वभाव ही बन जाय। यह इस विचार की जड़ है। सबके साथ समान रूप से जीने की भावना इसका फलित है। उसके लिए परहित-चिंतन के साथ स्वपरिश्रम अनिवार्य है। परिश्रम से जो प्राप्त हो उससे, दूसरों का खयाल रख कर, निर्वाह करना और शोषण को न आने देना, फिर भले ही हमें कमी पड़े, यह इस वृत्ति का प्रत्यक्ष स्वरूप है।

इस रूप में भूदान-वृत्ति हमारे समग्र जीवन से जुड़ी रहेगी। प्रत्येक व्यवहार में उसका अस्तित्व अनिवार्य है। दैनंदिन-जीवन में सर्वोदयी स्वभाव की स्थापना मानव-जीवन की नींव है। हमारा व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन इससे ओत-प्रोत रहे तो सर्वोदय की साधना बहुत सरल है।

सर्वोदय संकुचित नहीं है, बल्कि वह सृष्टिनियम के अनुसार ही है। ईश्वर अस्वाभाविक असमानता कभी नहीं चाहता। अतः ऐसे जीवन-संदेश को नदी के अविरल प्रवाह की तरह बढ़ने देना जरूरी है। स्पष्ट है कि अभी पूरी ताकत उसमें नहीं लगी है। आज क्या देहातों में और क्या शहरों में, विवेक-विचार नहीं रहा। मानो विवेक की संदूक लोक-हृदय में बंद है। पर उत्थान और विकास की आकांक्षा मनुष्य-हृदय में भरी पड़ी रहती है। उसके लिए उचित राह वह ढूँढ़ नहीं पाता। उसके हृदय में व्यापक प्रेम के बीज भी पड़े रहते हैं। लेकिन उसके विकास का अवसर वह नहीं ढूँढ़ता। इसलिए सर्व प्रथम मन, बुद्धि और हृदय को खोलने का कार्य करना जरूरी है; तभी मनुष्य मनुष्य बन सकता है। कुछ सुझाव इसके लिए सहायक हो सकते हैं :

(१) मानव-जीवन के व्यापक व्यवहार में हमारा आधार विवेकशीलता रहे।

(२) सामाजिक जीवन में समानहित का ध्यान रख कर जीते हुए व्यक्तिगत आचरण उच्चतर रखने का हमारा प्रयत्न रहे। तभी हम सामाजिक आचरण की नींव डाल सकते हैं।

(३) स्वकर्तव्य का भान सतत रख कर त्याग, तपस्यामय जीवन से हम आनंद उठाते रहें। यह शुद्ध और आत्मिक आनंद रहेगा।

(४) हमारे सद्गुणों और आचरणों की जाँच का थर्मामिटर हमारा परिवार है। एक तरह से वह हमारी प्रयोग-शाला ही है। अतः हमारे आचरण की प्रभाव-सुगंध वहाँ फैल जानी चाहिए। परिवारसहित आसपास के लोगों में हम प्रेरणा-निर्माण कर सकें तो मानना चाहिए कि हम काफ़ी हद तक सफल हैं।

(५) जन-संपर्क की हमारी स्वाभाविक भावना होती है। यह जन-संपर्क स्वदेशी धर्म के विपरीत न हो, इसका हमें भान रखना चाहिए।

(६) सेवा के लिए निकट के क्षेत्रों को छोड़ कर इधर-उधर दौड़ना और शक्ति का नाश करना सर्वोदय की नीति के विपरीत है। सेवा स्थानीय हो सकती है। विचार असीम हो सकते हैं। आजकल हवाई जहाज और रेलों के द्वारा दौड़-धूप करके इधर-उधर व्याख्यान देते रहने से ही समस्या हल नहीं हो सकती। इससे समय की ही बरबादी होती है।

(७) सर्वोदय-जीवन को व्यवहार में लाने की दृष्टि से आसपास के क्षेत्रों का एक 'सेवा-केंद्र' बनाना आवश्यक है। तभी हम प्रयोगशाला के रूप में सामाजिक जीवन की बुनियाद डाल सकेंगे।

विचार-प्रचार के हमारे साहित्य, पत्रिका आदि साधन भी ऐसे तत्पर रहें, जो हमारे कार्यों का और जीवन का प्रतिबिंब प्रस्तुत कर सकें।

कार्यकर्ताओं में सहजीवन और सतत संपर्क की नितांत आवश्यकता है। उसके अभाव में न तो शक्तियों का यथोचित उपयोग हो पाता है और न सबको बराबर मार्गदर्शन मिल पाता है। इसलिए सर्वोदय के निर्माण में हमारे जीवनदानियों का बहुत महत्त्व है। लेकिन इस कार्य का नियोजन ठोस बुनियाद पर होना चाहिए। भूदान-वृत्ति बढ़ाने की दृष्टि से हमें इन बातों पर गहराई से विचार और अमल करना चाहिए। गांधीजी और विनोबा हजारों साल की तपश्चर्या के बाद मिलते हैं। उनके जीवन-संदेश का लाभ न लेना दुर्भाग्य ही माना जायगा।

---

www.vinoba.in

तमिलनाड की पदयात्रा से

(निर्मला देशपांडे)

प्राची के मुख पर प्रकाश-रेखा दिखायी देते ही प्रसन्न प्रकृति के साथ हमारे 'चलते-फिरते-विद्यापीठ' में काव्य-शास्त्र-विनोद आरंभ हो जाता है। एक संस्कृत श्लोक में कहा गया है —"जैसे मनुष्य कुदाली से खोद-खोद कर जमीन से पानी हासिल करता है, उसी तरह शिष्य को गुरु के पास छिपी हुई विद्या हासिल करनी होती है।" किसी सहयात्री की प्रश्नरूपी कुदाली निमित्त मात्र बन जाती है और ज्ञानप्रवाह आरंभ हो जाता है। एक सहयात्री ने अध्ययन के बारे में सवाल पूछा। विनोबाजी ने कहा—"मैंने जब शांकरभाष्य पढ़ा, तब से मुझ पर बिच्छू काटने का कोई असर नहीं हुआ। उसके पहले तीन-चार दफा मुझे बिच्छू ने काटा था, जिससे काफी तकलीफ हुई थी; परन्तु शांकरभाष्य पढ़ने के बाद बिच्छू ने काटा, तो भी कोई वेदना मालूम नहीं हुई। शंकराचार्य का पहला ही वाक्य है—'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा।' 'अथ' का मतलब है शमदमादि की साधना करने के बाद, नित्यानित्य की पहचान होने के बाद, विकारों से मुक्त होने के बाद, मुमुक्षुत्व प्राप्त होने के बाद, आदि। इन दिनों कालेज में एम. ए. के अध्ययन में शांकरभाष्य का कुछ हिस्सा होता है। वास्तव में यह पहला वाक्य पढ़ते ही प्रोफेसर और विद्यार्थी, दोनों को वह किताब बंद करनी चाहिए। परन्तु वे ऐसा नहीं करते हैं, आगे पढ़ते ही जाते हैं और फिर यह भी चर्चा करते हैं कि शंकर का अमुक तत्त्व है, रामानुज का अमुक; दोनों में अमुक श्रेष्ठ है, आदि। अब शंकर और रामानुज, दोनों को तराजू के दो पलड़ों में डाल कर तौलने वाले का हाथ कितना मजबूत होना चाहिए?

"अपने जीवन में मुझे हमेशा जो विचार जँचा, उस पर उसी क्षण अमल करना, शुरू किया। विचार जीवन में लाये बगैर आगे के विचारों का आकलन ही नहीं हो सकता है, फिर तो सिर्फ शब्दों के अर्थ मालूम हो जाते हैं। मैंने एक साल तक अर्थशास्त्र का अध्ययन किया था। उस वक्त मैं दिन में सिर्फ दो आने का आहार लेता था। लोग मुझसे पूछते थे कि अर्थशास्त्र के अध्ययन का इस दो आने वाले आहार से क्या ताल्लुक है? लेकिन क्या दुनिया में गरीबी है, यह सिर्फ किताबें पढ़ने से मालूम हो सकता है? मैंने अर्थशास्त्र की बहुत ज्यादा किताबें नहीं पढ़ीं, चार-पाँच किताबों का अध्ययन किया, बाकी मेरा काम और चिंतन चलता था। एक साल में मुझे अर्थशास्त्र का पर्याप्त ज्ञान हुआ।

"मेरी माँ की मुझ पर बड़ी श्रद्धा थी। पिताजी ने कभी उससे कुछ पूछा, तो वह कहती थी कि विन्या से पूछ कर जवाब दूँगी। भगवान् को एक लाख चावल के दाने समर्पण करने का उसका एक व्रत था। मेरे पिताजी वैज्ञानिक थे। उन्होंने एक दफा माँ से कहा—"तुम क्यों नाहक चावल का एक-एक दाना गिनती रहती हो? एक लाख गिनने में नाहक ही समय चला जाता है। ऐसा क्यों नहीं करती कि एक तोले में चावल के जितने दाने आते हैं, उसका हिसाब कर लो और फिर तराजू से एक लाख तोल लो। चाहे तो ऊपर से और थोड़ा-सा चावल उसमें डाल देना।" माँ मेरे पास आकर कहने लगी—"देखो विन्या! वे ऐसा कहते हैं। अब मैं क्या जवाब दूँ?" मैंने कहा—"भगवान् को एक लाख से न अधिक चावल चाहिए और न कम चाहिए, ठीक एक लाख ही चाहिए। ठीक गिन कर एक लाख अर्पण करना यही भक्ति है। ५×५ इस (गुणाकार) के सवाल का का जवाब २० कहा तो भी गलत है और ३० कहा तो भी गलत है। ठीक २५ ही कहना होगा और अगर तराजू से नाप कर ही देना है, तो फिर सीधे एक-दो बोरे चावल ही क्यों न चढ़ाये जायँ?"

स्त्रियों के अधिकारों के बारे में विनोबाजी ने कहा—"बहुत पुराने जमाने से एक भ्रम चलता आया है, जिसके मूल में एक तत्त्वविचार है। कुछ दार्शनिकों ने माना है कि आद्यतत्त्वों में एक तत्त्व नहीं, बल्कि दो तत्त्व हैं—स्त्रीतत्त्व और पुंतत्त्व—प्रकृति और पुरुष। प्रकृति जड़ होती है और पुरुष चेतन। इस पर कुछ लोग यह भी कहने लगे कि स्त्रियों को मोक्ष का, वेदाध्ययन का अधिकार नहीं है, क्योंकि वे जड़ हैं। वे इस जन्म में श्रद्धा-भक्ति रख सकती हैं और फिर अगला जन्म पुरुष का पाकर मोक्ष हासिल कर सकती हैं। लेकिन स्त्री-जन्म में ही मोक्ष हासिल नहीं हो सकता है। यह सारी गलतफहमी उस प्रकृति-पुरुष वाले रूपक के कारण हुई है। व्याकरण में "प्रकृति" शब्द का स्त्रीलिंग और "पुरुष" शब्द का पुल्लिंग है। परन्तु वास्तव में प्रकृति याने जड़ अंश और पुरुष याने चेतन अंश। स्त्री और पुरुष, दोनों में जड़ अंश भी होता है और चेतन अंश भी। शरीर जड़ है और आत्मा चेतन, इसलिए दोनों में दोनों अंश समान हैं; यह नहीं कि स्त्री के शरीर में आत्मा का अंश कम है और शरीरांश ज्यादा है या पुरुष के शरीर में आत्मा का अंश ज्यादा और शरीरांश कम है। लेकिन फिर भी वह भ्रामक विचार चलता आ रहा है।"

उड़ीसा से आये हुए दो भाई यात्रा में साथ हैं। उनमें से एक भाई ने चुनाव और राजनीति की चर्चा छेड़ी। विनोबाजी ने कहा कि "लोकनीति में विश्वास रखने वाले को चुनाव से बिलकुल अलग रहना चाहिए। जैसे चुनाव है ही नहीं, यों मानकर अपना काम करते रहना चाहिए।"

उस भाई ने पूछा—"राजनीति और लोकनीति में मूलभूत फर्क क्या है?" विनोबा—"राजनीति में ऊपर से नीचे जाने की प्रक्रिया है, लोकनीति में नीचे से ऊपर जाने की प्रक्रिया है। राजनीति में केन्द्र में सारी सत्ता रहती है, लोकनीति में गाँव-गाँव में। राजनीति में ऊपरवाले चंद लोग हुक्म चलाते हैं, लोकनीति में सारा अभिक्रम (इनीशिएटिव) लोगों के हाथ में रहता है।

उस भाई ने पूछा—"क्या आज चीन में लोकनीति की स्थापना हुई है?" विनोबा—"बिलकुल नहीं। वहाँ पूरे अर्थ में राजनीति है। सारी सत्ता केन्द्र के हाथ में है। केन्द्र-सरकार चाहे तो सारे देश को सेना में भर्ती होने का हुक्म दे सकती है। आज लोकनीति न चीन में है, न रूस में, न और किसी देश में।"

विनोबा ने आगे चल कर कहा —"हम चुनाव आदि में नहीं पड़ेंगे—इसलिए नहीं कि हमारा सरकार से असहयोग है, बल्कि इसलिए कि हमारा सरकार से सहयोग है। हम लोकनीति की स्थापना करके सरकार को ही मिटाना चाहते हैं और इसमें सरकार को भी खुशी होना चाहिए। फूल गिरता है और उसमें से फल पैदा होता है, यह फूल के लिए खुशी की बात है, दुःख की नहीं। फूल नहीं गिरेगा, तो फल कैसे पैदा होगा?"

सामूहिक पदयात्रा के बढ़ते चरण

पंजाब—पटियाला क्षेत्र के राजपुरा तहसील में ता० १२ जुलाई से १४ अगस्त तक पदयात्रा हुई। २४४ देहातों में संदेश पहुँचाया गया। इस प्रचार में ८० ग्रामीण साथ देने आये। शिविरों में डेपुटी स्पीकर सरदार हुक्मसिंह, डॉ० गोपीचंद भार्गव और श्री अमरनाथ विद्यालंकार पधारे थे।

कर्नाटक—विजापुर तहसील में पदयात्रा हुई। ११ टोलियों द्वारा १२८ देहातों से ६५ दाताओं द्वारा १४० एकड़ भूदान और १० संपत्ति-दान-पत्र मिले। ३२५ रुपयों की साहित्य-बिक्री हुई।

मध्य-भारत—सिहोर तहसील में ता० २० सितंबर से १ अक्टूबर तक पदयात्रा हुई। १२ टोलियों द्वारा ५१ गाँवों में संदेश पहुँचाया गया। ११ गाँवों में से ३२ एकड़ भूदान, ७ दाताओं से ८० रुपयों का संपत्तिदान और ११० रुपयों की साहित्य-बिक्री हुई।

हैदराबाद—इदगाँव तहसील में ३० सितम्बर से पदयात्रा हुई। ५० गाँवों में १८ व्यक्ति घूमे। इस सप्ताह में २० देहातों से ८६ दाताओं द्वारा ७० एकड़ भूदान, ९ संपत्ति-दान-पत्र, ४ जीवन-दानी मिले। १४० रु० का साहित्य बेचा गया। २५ एकड़ भूमि का वितरण हुआ।

उत्कल—रिआमाल तहसील में ता० २९ सितम्बर से ५ अक्टूबर तक पदयात्रा हुई। २३५ दाताओं से ५८४ एकड़ भूदान और १३ पूरा समय देने वाले व्यक्ति मिले। कुछ ग्राहक बने और ७० रुपयों की साहित्य-बिक्री हुई।

बाहाड़ाझोला तहसील में १३ सितम्बर से २२ सितम्बर तक सप्ताह मनाया गया। १० टोलियों द्वारा १९२ गाँवों में संदेश पहुँचाया गया। २२ गाँवों में १०७ दाताओं ने ९९६ एकड़ भूदान, २ संपत्ति-दान-पत्र, ५ पूरा समय देने वाले कार्यकर्ता और १५ व्यक्ति ½ समय देने वाले मिले। ५ ग्राहक बने और ७० रू० का साहित्य बेचा।

थाना सिमापाली में भी ऐसा ही प्रयत्न ता० ११ से २० सितम्बर तक हुआ। ९२ दाताओंसे ७५ एकड़ भूमि १२ गांवों से मिली। २७ रुपये का साहित्य बिका।

उत्तर प्रदेश—गाजीपुर तहसील में ता० ११ से १८ सितम्बर तक पदयात्रा हुई। ५२ दाताओं से २५ एकड़ भूदान और १३ दाताओं से ७५ रुपये का संपत्तिदान मिला। २० कार्यकर्ता घूमे, ३३ पूरा समय देने वाले कार्यकर्ता मिले। हुसेनगंज तहसील में १८ से २६ सितंबर तक पदयात्रा हुई। १३ गाँवों में संदेश पहुँचाया गया। २६ दाताओं से २१ एकड़ भूदान मिला। १७३ रुपयों की साहित्य-बिक्री हुई।

फैजाबाद जिले की बहराइच तहसील में १५ सितंबर से ८ अक्टूबर तक सप्ताह हुआ। २८८ दाताओं ने ३२३ एकड़ भूदान दिया, १६४१ दाताओं से २०००रु० का

www.vinoba.in

संपत्तिदान, ८ पूरा समय देने वाले कार्यकर्ता मिले। १३ भूदान-पत्रिका के ग्राहक बने और ३०० रु० का साहित्य बेचा। यह पदयात्रा हिमालय के तराई में चल रही है। बारिश, मलेरिया और कई प्रकार की कठिनाइयाँ होते हुए और कार्यकर्ता बीमार पड़ रहे हैं। ऐसी हालत में भी पदयात्रा चलती रही।

—सामूहिक पदयात्रा-उपसमिति

भूदान-आंदोलन की प्रगति

बिहार की सितम्बर मास की प्रगति

क्रम	जिला	दानपत्र	प्राप्त भूमि एकड़ डि०	वितरित भूमि एकड़ डि०	परिवार
१.	चंपारन	३	५.५०	३२.९०	४७
२.	दरभंगा	९	३१.५९	१८.२८	४१
३.	पूर्णियाँ	२६४	३९८. ६	४७९.११	७५
४.	मुजफ्फर	६२	३६.३८	५०.४१	९७
५.	राँची	—	—	१६७२.६४	१०७६
६.	संथाल परगना	९६	५८.९४	४०.३९	२१
७.	सहर्षा	—	—	५९४.४८	२७७
८.	सारण	१५८	७७.१९	२९.३८	४७
९.	सिंहभूम	२	१.८१	—	—
१०.	हजारीबाग	१	४.४	६७३.१९	३३३
		कुल ५९५	६१३.५१	३५९०.७८	२०१४

अन्य जिलों से सितंबर के आँकड़े नहीं मिले।

सितंबर माह में चंपारण, दरभंगा और सिंहभूम जिले से ७४८) रु० के ३५३ संपत्तिदान-पत्र, १४९ मन के अन्नदान-पत्र मिले। १०९३ रु० की साहित्य-बिक्री हुई।

बिहार भूदान-यज्ञ-समिति, बुनियादगंज —दफ्तर-मन्त्री

बिहार में सामूहिक पदयात्रा

दरभंगा के प्रशिक्षण-शिविर के बाद ता० २५ सितम्बर से १ अक्टूबर तक १६५ विद्यार्थियों की ३५ टोलियों ने १९५ गाँवों में **दरभंगा थाने** में सामूहिक पदयात्रा की। २ अक्टूबर को **तारालाही गाँव** में उन टोलियों का शिविर हुआ। ५६ भूदान-पत्रों द्वारा १५ एकड़ भूमि, ८१७) रु० तथा ७१ मन ९ सेर गल्ला वार्षिक के ५३० संपत्तिदान-पत्र मिले। ५१७ व्यक्तियों ने ५२१२ दिन के श्रमदान का संकल्प किया। ३२४) रु० की साहित्य-बिक्री हुई।

दरभंगा जिले में प्रथम ग्रामदान भरौजा के ग्रामवासियों ने किया।

दरभंगा जिले में लहेरियासराय के उत्तरीय हिस्से के १४६ गाँवों में सामूहिक पदयात्रा ५ टोलियों को लेकर चालू की गयी। हरिहरपुर के श्री सूर्यनारायण झाजी ने २५१) वार्षिक संपत्ति-दान की घोषणा की। एक भाई ने सर्वस्व-दान दिया।

मुंगेर जिले के ४० भूदान-कार्यकर्ताओं का सघन पदयात्रा-शिविर १–२ अक्टूबर को **महादेव सिमरिया** गाँव में हुआ। गांधी-जयंती के अवसर पर **सिकंदरा थाने** से सघन पदयात्रा शुरू हुई। श्री धीरेन्द्रभाई मजूमदार के नेतृत्व में दस टोलियों ने पदयात्रा की। महादेव सिमरिया धर्मशाला में सार्वजनिक सभा में श्री धीरेन्द्र भाई मजूमदार, श्री राधाकृष्ण बजाज और जिला-संयोजक श्री रामनारायण सिंह के भाषण हुए। तीन गाँवों में सामूहिक श्रमदान और सूतयज्ञ भी हुआ।

ता० २ से ११ अक्तूबर तक मुंगेर जिले में सिकन्दरा थाना में सघन पद-यात्रा का कार्यक्रम श्री धीरेन्द्र भाई के नेतृत्व में संपन्न हुआ। इस सिलसिले में १६१ गाँवों में १० टोलियों द्वारा ३२७ मील की यात्रा हुई। ३ दानपत्रों द्वारा ८ एकड़ भूमि, १०४ दानपत्रों द्वारा १३६) व २१ मन गल्ला का सालाना संपत्ति-दान मिला। १३२ एकड़ भूमि वितरित की गयी। १०८ का साहित्य बिक्री। ३६३ समयदानी व ५० आंशिक समयदाता मिले।

पूर्णियाँ जिले के कदवा थाने में १ सितंबर से जो सामूहिक पदयात्रा चल रही थी, उसका वितरण-समारोह २ अक्टूबर को बिहार राज्य के कल्याण-मंत्री श्री भोलाशास्त्री के सभापतित्व में सालमारी उच्च विद्यालय में हुआ। एक सौ एकड़ भूमि कदवा थाने और ३८६ एकड़ ७५ डि. इस्लामपुर, चोपडा और किसनगंज थाने की बाँटी गयी। पूर्णियाँ जिले का प्रथम ग्रामदानी गाँव अराजी बठौरा का बँट-वारा भी उसी दिन शास्त्रीजी के हाथों हुआ। भूमिहीनों के बीच कुदालों का वितरण किया गया।

पूर्णियाँ जिले में बनमनखी कालेज के ४० छात्रों ने २४ अक्तूबर से ३१ अक्तूबर तक पदयात्रा की। प्रोफेसर बलरामसिंहजी के सहयोग से दस टोलियाँ बनायी गयी। इनका एक दिन का शिविर हुआ। श्री बैजनाथ बाबू व माननीय मंत्री भोला पासवानजी का भाषण हुआ। छात्रों ने ६० गाँवों की परिक्रमा में १३५ दानपत्रों द्वारा करीब ५००) के संपत्ति-दान-पत्र प्राप्त किये। १७५) का साहित्य बेचा।

ता. ३-४ अक्टूबर को कटिहार थाने के सौरिया में भूदान-शिविर किया गया, जिसमें थाने के काफी कार्यकर्ता उपस्थित थे। शिविर के उपरान्त ९ टोलियाँ सामूहिक पदयात्रा के लिए निकली। ५ अक्टूबर को सर्वोदय-विद्यालय, कोढा में सामूहिक पदयात्रा के लिए सभा हुई।

कटिहार थाना के सामूहिक पदयात्रा के सिलसिले ८८ गाँवों में समाएँ हुईं। २४ दाताओं से १३ एकड़ भूमि प्राप्त हुई। ६ सर्वोदय-सेवक बने। तीन गाय तथा साढ़े आठ मन गल्ला के दान-पत्र मिले। १३६) की साहित्य-बिक्री हुई। ६४ आ-दाताओं के बीच ७६ एकड़ भूमि वितरित की गयी। तीन बैल मिले, जो ३ दाताओं को दिये गये।

सिंहभूम जिले में १९–१० से २७–१० तक की पदयात्रा ६ टोलियों द्वारा ४८ गांवों में हुई। कुल मील १२५। भूदान ५३ दानपत्रों द्वारा २५ एकड़। संपत्तिदान ५५) तथा ५॥ मन, श्रमदानी ७, जीवनदानी १, सर्वोदय-सेवक १५, बुद्धिदानी ५, साहित्य-बिक्री २६)की हुई।

चम्पारन जिले में ३–१० से १०–१० तक घोडासहन थाने में समयदानी विद्यार्थियों द्वारा सामूहिक पदयात्रा का कार्यक्रम चला। ६५ विद्यार्थियों की १४ टोलियाँ ११५ गाँव में घूमी। १४३ दान-पत्रों द्वारा ५०८) व २० मन अनाज सालाना संपत्तिदान में मिला। ६ एकड़ जमीन मिली। २०) का साहित्य बिका। ४३ सर्वोदय-सेवक बने।

बिहार भूदान-समाचार

संथाल परगना में २०, २१ व २२ अक्तूबर को तीन दिन का जिले का चतुर्थ अधिवेशन रामगढ़ में संपन्न हुआ। वीरभूमि जिले के संयोजक श्री लाल बिहारी बाबू सभापति रहे। जीवनदानियों में आयी हुई शिथिलता का जिक्र करते हुए श्री मोतीलाल केजरीवालजी ने कहा, "हमें तो सर्वोदय-रूपी मकान का निर्माण जीवनदान-रूपी ईंटों से करना है।" इससे प्रभावित होकर ४८ व्यक्तियों ने जीवनदान तथा ७५ व्यक्ति ग्रामोदय-सेवक बने। सभा में श्री कृष्णराजभाई मेहता और श्री श्यामसुन्दर बाबू के भाषण हुए। उक्त अवसर पर खादी-ग्रामोद्योग-प्रदर्शनी का एक विराट आयोजन किया गया था। १४५) की साहित्य-बिक्री तथा ३४ दाताओं द्वारा २३ एकड़ जमीन प्राप्त हुई।

१८ अक्टूबर से २० अक्टूबर तक जमशेदपुर में सर्वोदय-विद्यार्थी-परिषद के तत्त्वाधान में सर्योदय-शिविर का आयोजन किया गया था। शिविर का आवश्यक खर्च सर्वोदय-साहित्य की बिक्री से प्राप्त कमीशन से किया गया। कुल ४० छात्र और शिक्षकों ने शिविर में भाग लिया। उद्घाटन श्री दादा धर्माधिकारीजी ने किया था।

२८ सितम्बर को पटना में बिहार भूक्रान्ति-सम्मेलन हुआ था, जिसमें भिन्न-भिन्न जिलों के भूदान-समिति के सदस्य तथा संयोजक आये थे। कार्य को आगे बढ़ाने के लिए 'संपत्तिदान-समिति' का गठन हुआ। समिति की पहली बैठक ४ अक्टूबर को धनबाद में हुई, जिसमें निर्णय किया गया कि बिहार के प्रत्येक जिले के भूदान-समिति से अनुरोध किया जाय कि वे संपत्तिदान के काम में गति लाने के लिए अपने जिले के लिए एक संपत्तिदान-समिति बना कर संयोजक को मनोनीत करें। मुख्य शहरों में महीने में कम-से-कम दो बार जुलूस निकाला जाय, जिसमें सम्पत्तिदान सम्बन्धी पर्चे तथा पोस्टर्स भी रहे तथा सम्पत्तिदान और भूदान-सम्बन्धी नारे भी लगाये जायँ। विद्यार्थियों का सहयोग भी लिया जाय। सम्पतिदान का विचार तो हम सबको समझाना चाहते हैं, पर चूँकि एक ही समय में सभी लोगों से सम्पर्क स्थापित करना कठिन है, इसलिए सर्वप्रथम चुने हुए लोगों से ही सम्पर्क स्थापित किया जाय।

---

www.vinoba.in

लायसेन्स नं. ए. ३४ रजिस्टर्ड नंबर ए. ३५४
(पहले से डाक-महसूल दिये बिना भेजने का परवाना प्राप्त)

गुजरात

खेड़ा जिला की ठासरा तहसील में ता० १९ अक्टूबर से ता० २९ अक्टूबर तक सामूहिक-पदयात्रा-शिविर हुआ। श्री रविशंकर महाराज के आशीर्वाद लेकर पूर्वतैयारी के लिए टुकड़ियाँ निकल पड़ीं। पूर्वतैयारी में ३१ गाँवों में वे पहुँचीं। ता० २१–२२ को डाकोर में शिविर हुआ, जिसमें गुजरात और बम्बई के ६० भाई-बहनों ने हिस्सा लिया। ता० २३ से सामूहिक-पदयात्रा चली। १० टुकड़ियों में २७ भाई और ५ बहनें थीं। ता० २९ को श्री मामासाहब फड़के द्वारा शिविर का पूर्णाहुति-समारोह हुआ।

शिविर के दरम्यान ९६ गाँवों में ३८७ मील की यात्रा हुई। १४ गाँवों में से २२ दाताओं से ४२ बीघा जमीन प्राप्त हुई। १५१ भाइयों से सम्पत्तिदान मिला। ६ दाताओं से साधनदान मिले। ७२ दाताओं से श्रमदान मिला। ९ भाइयों ने समय-दान दिया। १ आदाता को १ बीघा २० वसा जमीन वितरित की गयी। रु० २३०) की साहित्य-बिक्री हुई। 'भूमिपुत्र' के ११२ ग्राहक बने।

—संयोजक-सामूहिक पदयात्रा,

अहमदाबाद जिले के दहेगाम तहसील में तीसरी सामूहिक पदयात्रा २३ सितंबर से ११ अक्टूबर तक हुई। निम्न प्रकार दान मिला है। ७० गाँवों से १६ एकड़, २० गुंठा और ८२ बीघा भूदान, १३१ संपत्तिदान, ८ साधन-दान और ३८ श्रमदान मिले हैं। ८ गाँवों में भूमि-वितरण किया। १९८ रू. की साहित्य-बिक्री हुई। पदयात्रा में २८ कार्यकर्ताओं ने भाग लिया था।

भूदान-जयंती के दिन ग्रामदानी गाँव गजलावांट में एक सम्मेलन हुआ। इसमें विधिवत् ग्रामदान स्वीकार किया गया। इस अवसर पर एक दंपती ने अपनी दस एकड़ जमीन, हल, बैल आदि खेती के साधन दान में देने का संकल्प किया।

श्री दुलेराय मार्टलिया और उनके साथी अपनी वात्सल्यधाम-संस्था के क्षेत्र के ५० गाँवों में भूदानमूलक ग्रामरचना का गहरा प्रयोग करने में प्रयत्नशील हैं। अब वे छठे हिस्से का दान ही स्वीकार करते हैं। ५ गाँवों के करीब सभी किसानों ने छठा हिस्सा समर्पित कर दिया है। उपलेटा क्षेत्र में श्री रवजीभाई, श्री करसनभाई और श्री पोपटभाई भूदान का सघन काम कर रहे हैं। श्री अरुणभाई कुंडल क्षेत्र में प्रचारार्थ गये हैं। कटनी के समय शहर में काम करेंगे।

मणार कृषि-केंद्र में गांधी जयन्ती के अवसर पर मेले में कृषि-गोसेवा और भूदान-प्रदर्शनी हुई। लोकशाला के ४४ छात्रों ने १४६ घंटे प्रतिमास श्रमदान करने का संकल्प किया। दो कार्यकर्ताओं ने संपत्तिदान दिया। श्री वसंतभाई व्यास अभी मणार में ही काम कर रहे हैं।

अ० भा० भूदान-पदयात्रा की प्रगति

अ० भा० भूदान-पदयात्रा को अभी तक छह प्रांतों में से आठ महीनों में निम्न प्रकार भूदान-संपत्तिदान मिला।

प्रदेश	एकड़	संपत्तिदान (पाँच साल के लिए)	पदयात्रा मील
केरल	२४०	१५,०००	५००
तमिलनाड	३२०	२५,०००	४००
आंध्र	८,४१५	९२,०००	४५०
मैसूर	३५०	६१,०००	२२५
हैदराबाद	१,०५०	१०,०००	३५०
महाराष्ट्र (कुलाबा जिला तक)	११३	५,३३०	२३०
कुल	१०,४८८	२०८,३३०	२१५५

इसके अलावा आंध्र में १९, केरल व अन्य प्रांतों में ३–इस तरह कुल २२ ग्रामदान प्राप्त हुए। कुछ साधनदान, श्रमदान आदि भी मिले।

बंबई

बंबई शहर में ता० १ अक्टूबर से २० अक्टूबर तक विभिन्न भाषाओं की भूदान संबंधी १३११ रु० की २६४० पुस्तकें बेची गयीं। कुल २२९ ग्राहक बने। साधनदान में ८ भाइयों से ८२५) रु० का दान मिला। एक भाई से १०००) रु० का अंकितदान मिला।

विंध्यप्रदेश

छतरपुर जिले की बिजावर तहसील के मलहरा कानूनगो सर्किल में सामूहिक भूदान-पदयात्रा का आयोजन ता० ४ से १२ अक्टूबर तक किया गया। शिविर में स्थानीय सहयोग सराहनीय था। श्री विनोबाजी के सहयात्री श्री सुरेशरामभाई का बोधप्रद मार्गदर्शन शिविरार्थियों को मिला और ता० ६ अक्टूबर को १४ टोलियाँ पूरे मलहरा कानूनगो सर्किल में पदयात्रा के निमित्त निकलीं। दो टोलियाँ बिजावर और बक्सवाहा सर्किलों में के कुछ गाँवों में भी पदयात्रा पर गयीं।

ता० १२ अक्टूबर को संयोजक विंध्यप्रदेश-भूदान-यज्ञ-समिति की उपस्थिति में अंतिम समारोह सम्पन्न हुआ। इन दिनों में ५२८ मील की पदयात्रा हुई, जिसमें मलहरा सर्किल के १०६ गाँवों में से ८३ गाँवों में भूदान-यज्ञ का संदेश सुनाया गया, जिसके फलस्वरूप ६० गाँवों के २५७ दाताओं ने ९४१ एकड़ भूमि दरिद्रनारायण के नाम पर दी। इसके साथ ११ दाताओं द्वारा १०६ रु० का वार्षिक संपत्तिदान मिला। 'भूदान-यज्ञ' पत्रिका के १३ ग्राहक बनाये गये। कुल २२३ रु० की साहित्य-बिक्री हुई।

संवाद-सूचनाएँ—

विनोबा की तबीयत खराब

विनोबा का स्वास्थ्य एकाएक खराब हो गया, ऐसी खबर रेडियो तथा समाचार-पत्रों द्वारा मिली थी। खून का दबाव कम हो जाने के कारण उन्हें ग्लानि आ गयी और वे आठ-दस गज़ से ज़्यादा नहीं चल सके। बुखार भी हो गया। उन्हें मोटर द्वारा धारापुरम् ले जाया गया। उनकी तबीयत के बारे में तमिलनाड भूदान-यज्ञ-समिति के संयोजक श्री जगन्नाथनजी का निम्नलिखित तार सर्व-सेवा-संघ के गया-दफ्तर में ता० ४ नवंबर को आया :—

"बाबा मलेरिया से बीमार हैं। यात्रा ता० ८ तक बंद रखी है। आराम के लिए उन्हें मोटर द्वारा धारापुरम् ले गये हैं। चिंता की कोई बात नहीं। सब तरह की सुविधा की जा रही है। पत्र भेज रहा हूँ। —जगन्नाथन्" (अंग्रेजी का भाषांतर)

यद्यपि तार में जगन्नाथनजी ने लिखा है कि 'चिंता का कारण नहीं हैं,' किन्तु बाबा मोटरकार से जाने को तैयार हुए, इससे मालूम होता है कि बुखार ज़ोरों का होगा और काफ़ी कमज़ोरी आ गयी होगी। कार्यक्रम के अनुसार बाबा ८ नवंबर को धारापुरम् पहुँच कर दिन भर वहीं रहने वाले थे।

गया, ४–११–५६ —वल्लभस्वामी, मंत्री सर्व-सेवा-संघ

विषय सूची

क्रम	लेख	लेखक	पृष्ठ
१.	भगवान् कृष्ण का अंतरावतार!	विनोबा	१
२.	क्रांति और संस्थाएँ	धीरेन्द्र मजूमदार	२
३.	सबसे बड़ा संकट : स्वनियमन का अभाव	आचार्य तुलसी	३
४.	अहिंसा का विश्वीकरण	शंकरराव देव	३
५.	खादी की दृष्टि	विनोबा	४
६.	स्वतंत्र समाज की सांस्कृतिक आधार-भूमि	विल्फ्रेड वेलॉक	५
७.	सरकार का स्वरूप	विनोबा	६
८.	सर्वोदय की दृष्टि		
	१. अब भी अनर्थ टल सकता है	दादा धर्माधिकारी	६
९.	गयावाले आज भी देश को प्रेरणा दे सकते हैं!	दामोदरदास मूँदड़ा	७
१०.	इतिहास की पार्श्वभूमि में 'स्वदेशी' का अर्थ	विनोबा	८
११.	नयी तालीम का स्वरूप	नेमिशरण मित्तल	९
१२.	भूदान-वृत्ति कैसे बढ़े?	जेठालाल गोविंदजी	९
१३.	तमिलनाड की पदयात्रा से	निर्मला देशपांडे	१०
१४.	सामूहिक पदयात्रा के बढ़ते चरण	—	११
१५.	भूदान-आंदोलन की प्रगति संवाद-सूचनाएँ आदि	—	१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव-भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी। फोन नं० ११८५

www.vinoba.in